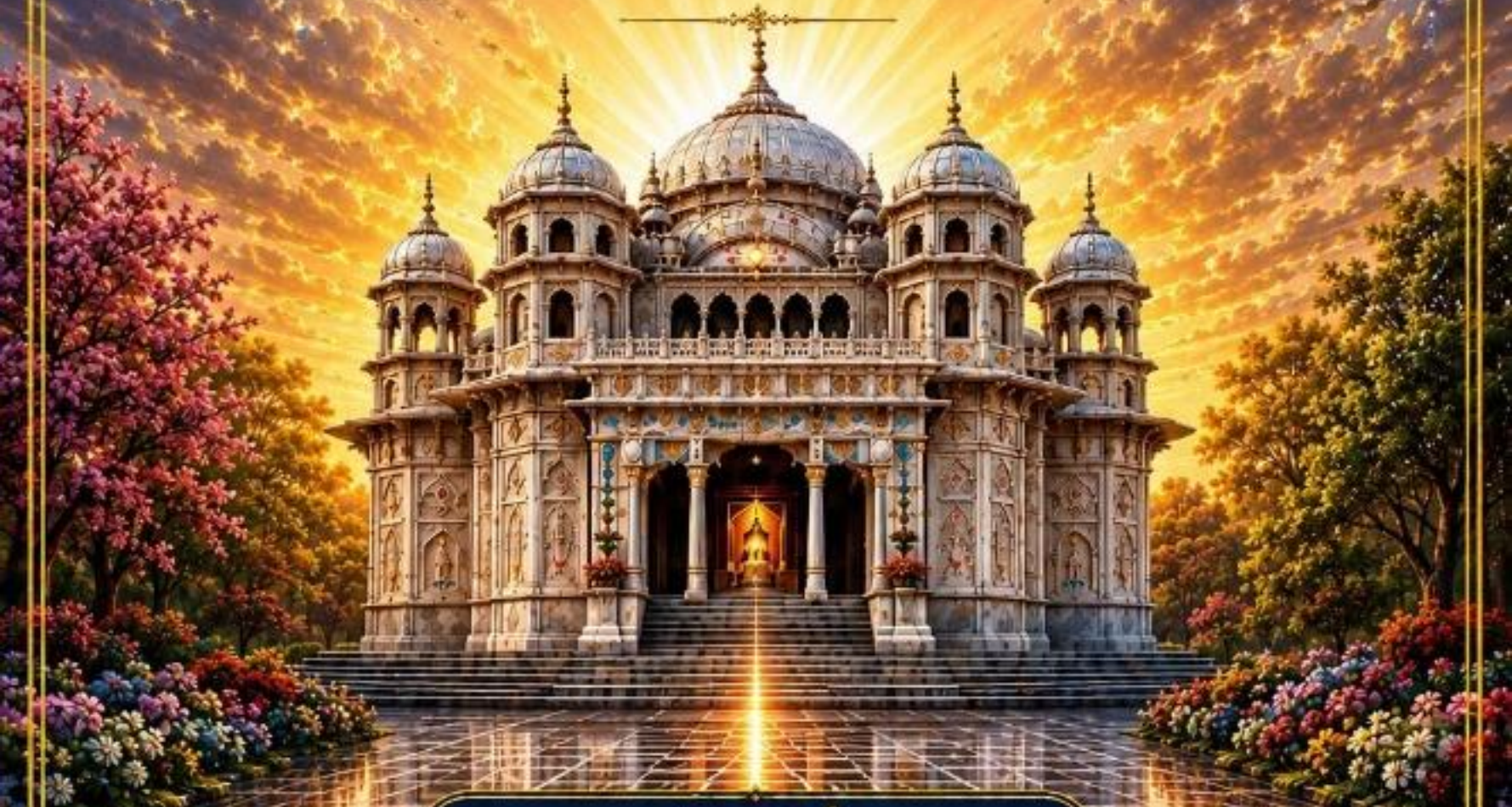
निजानन्द

सत्य, चेतना और आनन्द का दर्शन

श्री निजानन्द स्वामी द्वारा स्थापित एवं
महामति प्राणनाथजी द्वारा प्रसारित परम्परा
का संक्षिप्त परिचय

ए बानी गरजत मांझ संसार,
खोजी खोज मिटावे अंधार



प्रस्तुतकर्ता

श्री महेशभाई अ. पटेल

अध्यक्ष

श्री १०८ प्राणनाथ जी मंदिर ट्रस्ट
श्री ९ पदमावती पुरी धाम पन्ना (म. प्र.)

आत्म-जागृति से परमधाम तक

प्रयास से जागुति, जागुति से प्रेम, और प्रेम से सत्यपूर्ण जीवन तक

मनुष्य का जीवन केवल बाह्य उपलब्धियों की यात्रा नहीं, बल्कि चेतना के क्रमिक विकास की एक दिव्य यात्रा है। प्रयास में वह भ्रम, संघर्ष और बाह्य प्रयासों में उलझा रहता है। फिर सत्य की खोज उसे आत्मचिन्तन की ओर ले जाती है। श्रद्धा, साहस, आत्म-शुद्धि और जागुति के सोपानों से गुजरते हुए हृदय प्रेम के लिए खुलता है, ज्ञान और प्रेम का समन्वय होता है, और अंततः आत्मा अपने वास्तविक घर – परम सत्य – की पहचान प्राप्त करती है।

श्रीमद् तारतम वाणी इसी चेतना-यात्रा का दिव्य मानचित्र प्रस्तुत करती है। यह केवल दर्शन नहीं, बल्कि आत्मा को उसके मूल स्वरूप, परमधाम और परमप्रेम से पुनः जोड़ने का जागरण-संदेश है।

महामति प्राणनाथजी का संदेश मानवता को विभाजन से एकत्व, अज्ञान से बोध, और भय से प्रेम की ओर ले जाने वाला सार्वभौमिक आमंत्रण है।

"ए वाणी गरजत मांझ संसार,
खोजी खोज मिटावे अंधार!"

– श्रीमद् तारतम वाणी



प्रकाशक :
श्री प्राणनाथ जी मंदिर ट्रस्ट,
श्री ५ पदमावतीपुरी धाम, पन्ना (म.प्र.)
एवं
श्री प्राणनाथ वैश्विक चेतना अभियान,
श्री निजानंद आश्रम, वड़ोदरा
वेबसाइट्स :
Padmavatipuridham.org; Nijanand.org;
Sundersath.com; Chhatrasal.com

प्रथम संस्करण : 2026

लेखक एवं संपादक :
श्री नरेंद्र आर. पटेल, M.S., CSP

ISBN : 978-93-7026-089-4
9 789370 260894





निजानन्द

सत्य, चेतना और आनन्द का दर्शन

ISBN : 978-93-7026-089-4

प्रकाशक :

श्री प्राणनाथ वैश्विक चेतना अभियान,
श्री निजानंद आश्रम, वड़ोदरा, आजवा निमेटा चोकड़ी,
N.H. 8 बायपास, पो. सयाजीपुरा,
वड़ोदरा-3900019 गुजरात

फोन : +91-98980-00168;
+91-78741-51371; +1-973-760-9238

Website : Nijanand.org, Chhatrasal.com

COPYRIGHT C 2026 श्री प्राणनाथ वैश्विक चेतना अभियान
All Rights Reserved प्रथम संस्करण : 2026

Title : निजानन्द : आनंद, चेतना और सत्य का दर्शन

लेखक-संपादक : नरेन्द्र आर. पटेल, **M.S. C. S.P. (Retd.)**
मनु भाई ए. पटेल,
श्री प्राणनाथ वैश्विक चेतना अभियान
सुशान्त महात्मा,
श्री निजानंद आश्रम, वडोदरा

समर्पित : ब्रह्मलीन धर्मवीर जागनीरत्न पूज्य सरकार श्री

Email : jagni7yahoo.com

Audio books may be available on our websites

Watch PRANNATH TV Serial
on YouTube : Prannath Multimedia
Watch CHHATRASAL web series
on MX Player and Shemaroo Apps
Watch NIJANANDI Animation series
on YouTube Kids

Coming Soon : MAHAMATI web series

दो शब्द

प्रस्तुत पुस्तक ''**निजानन्द : सत्य चेतना और आनन्द का दर्शन**'' अपने नाम के अनुरूप सत्य सनातन निजानन्द सम्प्रदाय के सारगर्भित ज्ञान से परिपूर्ण एवं महामति श्री प्राणनाथ जी की श्रीमुखवाणी के मूलभूत तत्वों से ओतप्रोत है। निजानन्द क्या है और उसकी प्राप्ति के लिये साधक को क्या करना चाहिए, इस पुस्तक के द्वारा विधिवत जाना जा सकता है। विभिन्न आध्यात्मिक विषयों से परिपूरित यह पुस्तक श्री निजानंद-प्रणामी दर्शन को सारतः समझने के लिये विशेष उपयोगी है।

विद्वान लेखक श्री नरेन्द्र भाई पटेल जी ने अपने अथक प्रयास से यह सारगर्भित पुस्तक समस्त धर्मप्रेमी जनों को सहज उपलब्ध कराने के उद्देश्य से लिखकर भेजा था जिसका प्रकाशन श्री 108 श्री प्राणनाथ जी मंदिर ट्रस्ट, श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम, पन्ना द्वारा कराया जाकर आप समस्त सुन्दरसाथ के करकमलों में सादर समर्पित है।

इस लघु एवं ज्ञानमय पुस्तक में सभी जिज्ञासुओं की जानकारी हेतु सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी, महामति श्री प्राणनाथ जी, श्री मुखवाणी के सभी ग्रंथों का सारतत्व, वीतक, श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम के सभी मंदिरों एवं महत्वपूर्ण ऐतिहासिक-धार्मिक स्थलों की सामान्य जानकारी उपलब्ध है। साथ ही निजानन्द सम्प्रदाय की प्रमुख पुरियों तथा अन्य धार्मिक जागनी केन्द्रों के विषय में भी संक्षिप्त जानकारी उपलब्ध करायी गई है।

आशा है, यह पुस्तक सुन्दरसाथ एवं जिज्ञासुजनों के ज्ञान-वर्धन में अवश्य सहायक होगी।

महेश भाई पटेल

अध्यक्ष, श्री 108 प्राणनाथ जी मंदिर ट्रस्ट
श्री 5 पद्मावतीपुरी, धाम, पन्ना

विषय सूची

1	मानव जीवन की खोज से जागनी तक का विज्ञान	05
2	निजानंद स्वामी धनी श्री देवचन्द्र जी : खोज से जागरण तक	08
3	दिव्य दर्शन एवं तारतम ज्ञान पश्चात श्री देवचन्द्र जी की साधना-दृष्टि का खुल जाना	10
4	महामति श्री प्राणनाथ जी जीवन की आत्म-जागरण यात्रा	14
5	दीव-बंदर से जागनी लीला प्रारंभ	17
6	श्री विजयाभिनंद बुद्ध निष्कलंक	18
7	समाज-जागरण और संगठनात्मक अभियान	20
8	महामति प्राणनाथ जी-छत्रसाल मिलन और पन्ना-लीला प्रसंग	21
9	महामति प्राणनाथ जी : राजनीतिक दर्शन	23
10	महामति श्री प्राणनाथ : सामाजिक दर्शन	24
11	महामति श्री प्राणनाथ जी का	
12	दिव्य संदेश	25
13	निजानन्द दर्शन : चेतना-विकास की एक जीवंत यात्रा	27
14	श्री निजानन्द सम्प्रदाय पद्धति	29
15	श्री कुलजम स्वरूप का संक्षिप्त परिचय	31
16	तारतम वाणी का भाषिक दर्शन	32
17	श्री कुलजम स्वरूप के चौदह उपग्रंथों का संक्षिप्त विवरण	33
18	श्री बीतक साहेब : जागरण की जीवंत कथा	47
19	श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम, पन्ना की महिमा	50
20	दर्शनीय अध्यात्म नगरी-पन्ना	51
21	भगवान शिव पार्वती की भ्रमण स्थली	52
22	अनन्त श्री प्राणनाथ जी मंदिर (गुम्मट जी)	52
23	श्री पंजा साहब	53
24	श्री लच्छीदास का कड़ा	53
25	श्री बंगला जी मंदिर	54
26	रासमण्डल	55
27	श्री प्राणनाथ जी म्यूजियम	55
28	श्री देवचन्द्र जी मंदिर	55
29	श्री बाईजू राज मंदिर	56
30	श्री चौपड़ा मंदिर	57
31	ब्रह्ममुनि श्री केशव कुंज	57
32	श्री खेजड़ा मंदिर	58
33	किलकिला नदी-अमराई घाट	59
34	श्री 5 नवतनपुरी धाम, जामनगर	60
35	श्री 5 महामंगलपुरी धाम, सूरत,	60
36	श्री प्राणनाथ जी मंदिर, निजानंद आश्रम, रतनपुरी, यूपी	61
37	श्री प्राणनाथ जी मंदिर, श्री निजानंद आश्रम,	
38	वडोदरा	61
39	श्री प्राणनाथ जी मंदिर, शामलाजी	62
40	श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, सरसावा	62
41	श्री मंगल धाम, कालिमपोंग	63
42	श्री निजानंद आश्रम, शेरपुर	63
43	बुन्देलखण्ड नरवीर केसरी महाराजा छत्रसाल	64
44	ऐतिहासिक पृष्ठभूमि : संघर्ष की विरासत	64
45	आध्यात्मिक आयाम : संघर्ष का वास्तविक स्रोत	65
46	समग्र दृष्टि : आज के लिए संदेश	66
47	महात्मा गांधी और महामति प्राणनाथ	67
48	गांधी-दर्शन की वैश्विक अनुगूँज	68
49	प्रेम ब्रह्म दोऊ एक है : प्रेम ही परब्रह्म है	72
50	श्री निजानन्द-पद्धति (संस्कृत)	73
51	श्री निजानन्द-पद्धति (हिन्दी)	74
52	श्री विजयाभिनंद बुद्धजी को प्रणाम	75
53	**श्री विजियाभिनन्द बुद्धजी की प्रार्थना**	76
54	सक्षिप्त क्षर, अक्षर और अक्षरातीत....	80

मानव जीवन की खोज से जागनी तक का विज्ञान

बंदौं सदगुरु चरण को, करूँ सो प्रेम प्रणाम ।
अशुभ हरन मंगल करन, श्री देवचन्द्र जी नाम ।।
श्री प्राणनाथ निज मूल पति, श्री मेहेराज सुनाम।
तेज कुंवरि श्यामा युगल को, पल पल करूँ प्रणाम ।।
श्री प्राणनाथ तुम सत्य हो, तुम से चलत जहाज़ ।
मैं अधीन करनी नहीं, बाँह ग्रहे की लाज ।।

मनुष्य का जीवन मूलतः एक अनवरत खोज है, सुख की, शांति की, और उस स्थायी तृप्ति की जो परिवर्तनशील परिस्थितियों से परे बनी रहती है। पंचभौतिक देह में स्थित जीव प्रारम्भ में बाह्य जगत में संतोष ढूँढता है, संपत्ति, संबंध, उपलब्धि और प्रतिष्ठा में। यह खोज स्वाभाविक है, क्योंकि चेतना का प्रारम्भिक प्रवाह बाहर की ओर होता है। किंतु अनुभव का सार्वभौम सत्य यह है कि भौतिक उपलब्धियाँ क्षणिक संतोष तो देती हैं, पर अस्तित्वगत शांति नहीं। जैसे-जैसे यह बोध भीतर प्रखर होता है, चेतना स्वाभाविक रूप से दिशा बदलती है। यह पलायन नहीं, बल्कि विवेक का उदय है-क्षणिक और शाश्वत के भेद की पहली झलक। यही वह निर्णायक मोड़ है, जहाँ मनुष्य बाह्य संचय से आंतरिक जागरण की ओर मुड़ता है और जीवन के गहरे अर्थ की खोज प्रारम्भ होती है।

यहीं से एक मूलभूत प्रश्न जन्म लेता है यदि सुख और शांति की खोज अंततः भीतर की ओर ले जाती है, तो क्या धर्म केवल सांत्वना का साधन है या चेतना परिवर्तन का विज्ञान? श्री निजानन्द (प्रणामी) दर्शन इसी प्रश्न का गहन और समग्र उत्तर प्रस्तुत करता है। यह दर्शन भारतीय चेतना की उस अखंड धारा का प्रतिनिधित्व करता है जिसमें धर्म, ज्ञान और करुणा का जीवंत समन्वय है। यहाँ धर्म कर्मकांड या पहचान नहीं, बल्कि चेतना-जागरण की प्रक्रिया है-एक ऐसी यात्रा जिसमें आत्मबोध और लोकमंगल साथ-साथ विकसित होते हैं। इस दृष्टि में भारतभूमि केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि चेतना के उत्कर्ष की प्रयोगभूमि है, जहाँ मैं कौन हूँ? का प्रश्न केवल दार्शनिक जिज्ञासा न रहकर जीवंत अनुभूति का विषय बन जाता है।

मनुष्य को अपने जीवन का पूर्ण लाभ उठाने के लिए अपनी चेतना को समग्रता में समझना आवश्यक है। इसके लिए हमें चेतना के विभिन्न पहलुओं-विकास के स्तरों, बुद्धि की क्षमताओं, अनुभव की अवस्थाओं, स्वभाव की प्रवृत्तियों तथा जीवन के चार पक्षों-अंतर्जगत (मन), व्यवहार (शरीर और कर्म), संबंध एवं

संस्कृति, तथा सामाजिक व्यवस्थाओं–को एक साथ समझना होता है। जैसे–जैसे चेतना के स्तर विकसित होते हैं, दृष्टि मैं से हम और अंततः समग्रता की ओर विस्तृत होती है। मनुष्य में तर्क, भावना और नैतिकता जैसी क्षमताएँ समान गति से विकसित नहीं होतीं, इसलिए आंतरिक असंतुलन उत्पन्न होता है। अनुभव की अवस्थाएँ–जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तथा ध्यान में उपलब्ध होने वाली उच्चतर चेतन अवस्थाएँ–यह संकेत करती हैं कि मानव चेतना अपने सामान्य अहं–केंद्रित अनुभव से कहीं अधिक व्यापक और बहुआयामी है। प्रत्येक व्यक्ति का स्वभाव और प्रवृत्तियाँ भिन्न होती हैं, और जीवन को समझने के लिए भीतर, व्यवहार, संबंध और व्यवस्था, इन चारों आयामों का समन्वित अवलोकन आवश्यक होता है। जब ये सभी आयाम संतुलित और एकीकृत होते हैं, तब चेतना में एक नई अवस्था प्रकट होती है जिसे महामति प्राणनाथ ''**जागनी**'' कहते हैं।

जागनी केवल जागरूकता नहीं, बल्कि चेतना का समग्र रूपांतरण है। इसमें पहले जीव अपने प्रति सजग होता है, फिर आत्मबोध की दिशा में अग्रसर होता है, और अंततः अपने मूल दिव्य स्वरूप में स्थित होने का अनुभव करता है। तारतम वाणी इस यात्रा को केवल सैद्धांतिक रूप में नहीं, बल्कि जीवित अनुभव के रूप में प्रस्तुत करती है। यह बताती है कि जागरण कोई दूर की अवस्था नहीं, बल्कि चेतना की स्वाभाविक संभावना है, जिसे सही समझ और साधना के माध्यम से अनुभव किया जा सकता है।

आज का आधुनिक जीवन बाह्य प्रगति के साथ–साथ आंतरिक विखंडन का भी प्रतीक बन गया है। तेज़ गति, अनगिनत विकल्प, डिजिटल विचलन और मानसिक तनाव ने मनुष्य को निरंतर सक्रिय तो बना दिया है, परंतु जागरूक नहीं। जीवन का अधिकांश भाग विचारों, प्रतिक्रियाओं और आदतों की पुनरावृत्ति में व्यतीत होता है मानो मनुष्य रुटीन, रिपीटेशन और हैबिट का एक यांत्रिक ढाँचा बन गया हो। ऐसे समय में सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यही है–क्या हम सच में जागकर जीना चाहते हैं? जागना किसी दूर की अवस्था नहीं, बल्कि वर्तमान क्षण से प्रारम्भ होने वाली प्रक्रिया है। यह अपनी आदतों को देखने, विचारों के पार जाने, अहंकार की पकड़ को ढीला करने और चेतना की गहराई में उतरने का आह्वान है। यह जीवन से भागना नहीं, बल्कि जीवन को उसकी पूर्णता में देखने की कला है।

इसी परिप्रेक्ष्य में आध्यात्मिक साधना और सामाजिक दायित्व परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक–दूसरे के पूरक बन जाते हैं। साधना केवल व्यक्तिगत मुक्ति का साधन नहीं रहती, बल्कि चेतना के परिष्कार के माध्यम से समाज में समरसता, करुणा और संतुलन का आधार बनती है।

निजानन्द सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी को प्राप्त तारतम ज्ञान बीज के समान था, जिसका पूर्ण विकास और विस्तार महामति प्राणनाथजी की वाणी में हुआ। यह परंपरा

दर्शाती है कि ज्ञान का उद्देश्य केवल बौद्धिक तृप्ति नहीं, बल्कि जीवन-परिवर्तन और सामाजिक समरसता है। यहाँ धर्म भय, नियंत्रण या विभाजन का उपकरण नहीं, बल्कि सत्य, प्रेम और एकत्व का जीवंत अनुभव है-ऐसा अनुभव जो व्यक्ति की चेतना को निर्मल करता है और उसके व्यवहार को करुणामय बनाता है।

महामति प्राणनाथ जी का अद्वितीय योगदान उनके समन्वयकारी दर्शन में निहित है। उन्होंने वेद, उपनिषद, गीता, भागवत तथा कतेब परंपराओं के सत्यांशों को एक सूत्र में पिरोते हुए यह उद्घोष किया कि नाम, रूप और पंथ की विविधता के भीतर एक ही परम सत्य की चेतना स्पंदित है। यह दृष्टि विविधता का निषेध नहीं करती और न ही संकीर्ण आग्रह को पोषित करती है; बल्कि विविधता को स्तरबद्ध, संतुलित और अनुभवमय एकता में रूपांतरित करती है। तारतम ज्ञान इसी रूपांतरण की कुंजी है, जहाँ दर्शन बौद्धिक न रहकर जीवंत अनुभूति बन जाता है।

भारतीय ग्रंथ-परंपरा में भारतभूमि को कर्म और मोक्ष की पुण्यभूमि कहा गया है। यह केवल सांस्कृतिक गौरव का कथन नहीं, बल्कि एक गहरा चेतनात्मक संकेत है कि यह भूमि आत्मचिन्तन, करुणा और समन्वय की दीर्घ साधना से अभिसिंचित है। इसी आधार पर महामति प्राणनाथ जी ने भारत को तारतम ज्ञान की प्रयोगभूमि के रूप में प्रतिष्ठित किया, जहाँ मानव बुद्धि निष्कलंक बन सके, विवेक जागृत हो सके, और धर्म जीवंत अनुभव में रूपांतरित हो सके।

सत्रहवीं शताब्दी के सामाजिक और राजनीतिक संक्रमणकाल में यह दर्शन केवल आध्यात्मिक नहीं रहा, बल्कि जीवन्त सामाजिक शक्ति के रूप में प्रकट हुआ। सुंदरसाथ का विशाल समुदाय और महाराजा छत्रसाल जैसे नेतृत्वकर्ताओं में यह प्रेरणा जागी कि सत्य केवल भीतर अनुभव करने की वस्तु नहीं, बल्कि अन्याय के विरुद्ध खड़े होने की शक्ति भी है। यहाँ आध्यात्मिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व का अद्वितीय संगम दिखाई देता है।

अंततः, निजानन्द दर्शन धर्म की एक गहन पुनर्व्याख्या प्रस्तुत करता है। यहाँ धर्म कोई स्थिर पहचान नहीं, बल्कि चेतना की परिपक्वता है; साधना पलायन नहीं, बल्कि जाग्रत सहभागिता है; और मुक्ति मृत्यु के बाद प्राप्त होने वाली कोई आशा मात्र नहीं, बल्कि जीवन जीते-जी चेतना के जागरण का अनुभव भी है। जागरण से जीवन का वास्तविक आरंभ होता है, विवेक से कर्म शुद्ध होते हैं, और प्रेम से चेतना अपनी अखण्ड पूर्णता का अनुभव करती है।

अतः धर्म का अंतिम प्रयोजन भय-निवारण या कर्म-संहिता तक सीमित नहीं, बल्कि जाग्रत जीवन की कला है-ऐसी कला जिसमें आत्मा अपने मूल स्वरूप से परिचित होकर संसार में संतुलन, उत्तरदायित्व और करुणा के साथ जी सके। यही शांति की वास्तविक आधारशिला है व्यक्ति में भी, समाज में भी, और समस्त विश्व-चेतना में भी।

निजानंद स्वामी धनी श्री देवचन्द्र जी : खोज से जागरण तक



श्री देवचन्द्र जी का जीवन भारतीय अध्यात्म की उस प्रेरक परंपरा का उज्ज्वल उदाहरण है, जहाँ जिज्ञासा श्रद्धा से मिलती है, साधना विवेक से परिपक्व होती है, और भक्ति ज्ञान के आलोक में स्थिर होती है। 1581 ई. में उमरकोट (मारवाड़) के एक धर्मनिष्ठ वैष्णव परिवार में जन्मे श्री देवचन्द्र जी बचपन से ही गंभीर, अंतर्मुखी और सत्य-अन्वेषी थे। परंपरा उन्हें अक्षरातीत परब्रह्म की आह्लादिनी शक्ति श्री श्यामा जी से सम्बद्ध आत्म-चेतना के रूप में देखती है, एक ऐसी अंत:प्रेरणा, जिसने उनके भीतर परम सत्य की खोज को आरम्भ से ही प्रखर बना दिया।

बाल्यकाल में ही अपने गाँव का पिंगल श्याम मंदिर उनकी साधना-भूमि बन गया। ब्रह्ममुहूर्त में उठना, परिक्रमा करना, सत्संग सुनना और एकांत-चिंतन - ये सब उनके जीवन के स्वाभाविक हिस्से थे। चार वर्ष की नियमित साधना के बाद भी जब प्रत्यक्ष तृप्ति का अनुभव नहीं हुआ, तो उन्होंने इसे निराशा नहीं, बल्कि और गहन जिज्ञासा का संकेत माना। ग्यारह वर्ष की आयु से ही उनके भीतर मूल प्रश्न तीव्र हो उठे- मैं कौन, मेरा धनी/भरतार कौन है? संतों और विद्वानों के उत्तर उन्हें अधूरे लगे। इसी अनुभव ने उनके अंतर्मन में यह स्पष्ट कर दिया कि केवल भावनात्मक भक्ति पर्याप्त नहीं; ज्ञान-प्रकाश से आलोकित भक्ति ही स्थिर और सार्थक होती है।

परिवार ने उन्हें व्यापार-शिक्षा की ओर प्रवृत्त करना चाहा, पर उनका मन वहाँ नहीं रमा। साधु-संग, मंदिर-दर्शन और आध्यात्मिक संवाद ही उन्हें आकर्षित

करते रहे। अंततः 1598 ई. में, मात्र 16 वर्ष की आयु में, उन्होंने गृह-त्याग का साहसी निर्णय लिया और उमरकोट से भुज तक करीब 300 कि.मी. लम्बी कठोर पैदल यात्रा आरम्भ की। मार्ग में एक रहस्यमय **प्रथम दिव्य दर्शन** हुआ, पठान सिपाही के रूप में, जिसे वे उस समय पहचान न सके। किन्तु उस अनुभूति ने एक गहरा बोध जगा दिया- परमात्मा दूर नहीं, भीतर की निकटता में अनुभूत होते हैं।

कच्छ पहुँचकर उनकी साधना-यात्रा और व्यापक हो गई। उन्होंने मूर्ति-पूजा, हठयोग, अष्टांगयोग, पुष्टि-मार्गीय प्रेम-सेवा तथा दीर्घकालीन भागवत-श्रवण जैसे अनेक पथों का गंभीर अनुशीलन किया। उनका दृष्टिकोण किसी एक संप्रदाय तक सीमित नहीं था; वे जिज्ञासा-प्रधान और समावेशी साधक थे। उन्होंने मूर्ति-पूजा को चित्त-शुद्धि का प्रारम्भिक सोपान माना, अंतिम लक्ष्य नहीं। सन्यासी परंपराओं से दीक्षा, ध्यान और ज्योति-अनुभव प्राप्त हुए, पर ''मैं कौन?'' का प्रश्न अब भी पूर्ण उत्तर चाहता रहा।

अष्टांगयोग के अभ्यास से कैवल्य-शांति, बंधन-निवृत्ति और प्रकाश-अनुभव मिले, किंतु हृदय की गहराई में तृप्ति शेष रही। उनके भीतर एक सूक्ष्म विवेक जगा-यदि अंतिम सत्य केवल निर्विकल्प शांति है, तो प्रेम और संबंध का स्थान क्या है? इस चिंतन ने उन्हें यह अनुभव कराया कि शांति आवश्यक है, पर चेतना की पूर्णता प्रेम और ''रस-संबंध'' में ही खिलती है।

भुज में गुरु हरिदास जी के सान्निध्य ने उनकी साधना को सेवा-समर्पण की दिशा दी। सन् 1600 से 1606 के बीच उन्होंने अहं-रहित, निष्काम, सखी-भाव की प्रेम-सेवा को जीवन में उतारा। कथनी और करनी की एकता उनके जीवन-दर्शन का दृढ़ आधार बनी। चमत्कार-प्रधान मंत्रों या देह-लाभ के अपने गुरु के प्रस्तावों को उन्होंने विनम्रता से अस्वीकार किया, क्योंकि उनका ध्येय सत्य-बोध और परमधाम-संबंध था, न कि लोक-प्रभाव या प्रतिष्ठा।

गुप्त सेवा, ब्रह्ममुहूर्त परिक्रमा और भाव-प्रधान भक्ति उनके आंतरिक अनुशासन का हिस्सा बने। ध्यान में उन्हें ब्रज-मण्डल का 'द्वितीय दर्शन' हुआ, जिससे श्रीकृष्ण के स्वरूप के प्रति आत्मीय बोध जागृत हुआ। दर्शन की इस दूसरी अनुभूति के बावजूद वे वहीं नहीं ठहरे। रास लीला-रहस्य और परम स्वरूप के गूढ़ार्थ की

खोज उन्हें उमरकोट, सिंध से जामनगर, गुजरात तक ले गई, जहाँ उन्होंने चौदह वर्षों तक श्रीमद भागवत कथा का निष्ठापूर्वक श्रवण किया। कथा उनके लिए केवल ज्ञान नहीं, आत्मा का भोजन थी। गंभीर अस्वस्थता में भी उन्होंने कथा-श्रवण-व्रत नहीं छोड़ा।

आखिर 40 वर्ष की आयु में, सन् 1621 ई., आश्विन शुक्ल एकादशी को ध्यानावस्था में उन पर प्रेम-आनंद-प्रकाश की दिव्य मेहर अवतरित हुई और किशोर युगल स्वरूप परब्रह्म का साक्षात बोध हुआ। उनके सन्मुख प्रगट होने वाले आवेश स्वरूप से संवाद में उन्हें अपने सुंदरसाथ-परात्म की पहचान, श्यामाजी-आह्लादिनी शक्ति का बोध, और क्षर-अक्षर से परे अक्षरातीत परमधाम का यथार्थ ज्ञान मिला। भागवत को दिव्य संकेत मानते हुए इसके गूढ़ार्थ उद्घाटित होने का आश्वासन मिला। इसी क्षण 'तारतम बीज-वचन' उनके अंतःकरण में प्रतिष्ठित हुए; वे बुद्धावतार (सुप्त चेतनाओं को जगाने वाले) कहे गए। इस तृतीय दर्शन का प्रसंग श्री राज प्रगटन के रूप में मनाया जाता है। इसी प्रसंग के साथ निजानंद की एकीकृत परंपरा का प्रकाश-मार्ग आरम्भ हुआ, जिसमें निजानंद सद्गुरु स्वयं को निमित्त और परब्रह्म प्रियतम की अनुकंपा और प्रेरणा को मुख्य आधार मानते हैं।

दिव्य दर्शन एवं तारतम ज्ञान पश्चात श्री देवचन्द्र जी की साधना-दृष्टि का खुल जाना

श्री देवचन्द्र जी का जीवन एक गहरा आध्यात्मिक सूत्र देता है-साधना एक क्रमिक यात्रा है। प्रत्येक अनुभव एक सीढ़ी है; उसे अंतिम मंज़िल मान लेना साधक की भूल है। शांति साधना का आवश्यक आधार है, क्योंकि वही चित्त को स्थिर करती है; पर पूर्णता शांति में नहीं, प्रेम में है। ऐसा प्रेम जो परमात्मा के चित्त का परम स्वभाव है, जो ब्रह्मात्माओं की चेतना का भी मूल स्वभाव है। यह प्रेम पहले जीव में आत्मीयता के रूप में अंकुरित हो कर, फिर समर्पण के रूप में विकसित होता है, और अंततः एकत्व की अनुभूति और परमधाम लीला के आनंद में परिपूर्ण होता है। आनन्द, उमंग और प्रफुल्लता उस प्रेम की सहज अभिव्यक्तियाँ हैं।

यह प्रेम तब तक स्थायी नहीं होता, जब तक वह ऐसे सत्य-ज्ञान से आलोकित न हो, जो सभी सापेक्ष सत्यों को जोड़ कर एक परम सत्य को प्रकाशित करता हो। श्री देवचन्द्रजी के इस विशिष्ट मार्गदर्शन की वजह से उनका जीवन आज

भी अनेक लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

उनके साक्षात्कार से प्रकट तारतम ज्ञान सृष्टि को तीन मूल स्तरों में समझाता है– क्षर, अक्षर और अक्षरातीत। ये केवल स्थान नहीं, बल्कि चेतना और अनुभव के आयाम हैं। अक्षरातीत सर्वोच्च सत्य है–परमधाम, शुद्ध निजानंद का क्षेत्र, जहाँ चेतना पूर्ण, निर्लेप और स्वयं–प्रकाशित है। वहाँ न परिवर्तन है, न सृष्टि का प्रक्षेपण केवल स्थिर, अखंड अस्तित्व। मुण्डकोपनिषद (2.1.2) का वाक्य '**अक्षरात् परतः परः**' संकेत करता है कि परब्रह्म अक्षर ब्रह्म से भी परे है। यही परमधाम है, शुद्ध आनंद (निजानंद) का क्षेत्र।

इसके नीचे अक्षर ब्रह्म का स्तर है। यह शाश्वत है, पर संबंध, व्यवस्था और दिव्य नियमों से युक्त है। इसे शुद्ध, अविभाजित अस्तित्व अर्थात सत् स्वरूप कहा गया है। अक्षर ब्रह्म को बोलचाल में सत्ता का रूप कह दिया जाता है, लेकिन वास्तव में सत्ता सीमित, व्यक्तिगत अभिव्यक्ति का द्योतक है, जो अक्षर ब्रह्म के लिए सच नहीं है। जैसे समुद्र से तरंगें उठती हैं और उसी में विलीन हो जाती हैं, वैसे ही अनेक सत्ताएँ सत् से प्रकट होकर सत् में ही लीन होती हैं। अक्षर ब्रह्म वह शाश्वत और अविनाशी सत्ता है, जहाँ आनंद, ज्ञान और संतुलन अखंड रूप से विद्यमान रहते हैं। क्षर जगत की परिवर्तनशीलता और अशांति से परे यह सत् स्वरूप दिव्य व्यवस्था का आधार है, जिसमें चेतना स्थिरता, सामंजस्य और प्रकाश की अवस्था में स्थित रहती है।

दिव्य तारतम ज्ञान अक्षर ब्रह्म के भीतर तीन ऊर्ध्व क्षेत्रों का संकेत देता है, जहाँ अक्षरातीत का आनंद, बुद्धि और महिमा विभिन्न स्तरों में प्रकाशित होती है। यह वैदिक भाव ''**त्रिपाद ऊर्ध्व...**'' से साम्य रखता है– तीन अमृतमय भाग और चौथा सृष्टि से संबंधित। दार्शनिक दृष्टि से सत् स्वरूप अस्तित्व की स्थिरता और पहचान का आधार है; केवल ब्रह्म शुद्ध बुद्धि और योगमाया का आयाम है; तथा सबलिक ब्रह्म विद्या, स्मृति और संबंधात्मक चेतना का वह स्तर है, जहाँ लीला संतुलित, सूक्ष्म और आनन्दमयी रूप में अभिव्यक्त होती है। (देखिए पेज 40) अक्षर का चौथा क्षेत्र सृष्टि–प्रक्षेपण की सीमा है, वह सूक्ष्म द्वार जहाँ से ब्रह्मांडों की उत्पत्ति प्रारम्भ होती है।

अक्षर ब्रह्म के चौथे पाद (मन, अव्याकृत ब्रह्म) से क्षर पुरुष का क्षेत्र आरंभ होता है–परिवर्तन, समय, कारण–कार्य और अनुभव का जगत। क्षर को अक्षर का स्वप्न कहा गया है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि वह पूर्णतः मिथ्या है, बल्कि यह

कि उसका अस्तित्व आश्रित, सापेक्ष और अस्थायी है। जैसे स्वप्न स्वप्नद्रष्टा पर निर्भर होता है, वैसे ही माया ब्रह्म की प्रक्षेपण–शक्ति के रूप में कार्य करती है। यह शक्ति की अभिव्यक्ति है, परम सत्य का परिवर्तन नहीं। क्षर जगत में वही दिव्य चेतना विविध रूपों में प्रकट होती है, इच्छा, प्रकाश और वचन के रूप में। तारतम ज्ञान के अनुसार विभिन्न सभ्यताओं ने इन्हीं तत्त्वों को कृष्ण, मसीह, नबी या लोगोस जैसे नामों से अभिहित किया। ये परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक ही दिव्य बुद्धि की सांस्कृतिक एवं भाषिक अभिव्यक्तियाँ हैं।

श्री देवचन्द्र जी को सृष्टि की प्रक्रिया महत्तत्त्व (महाबुद्धि), हिरण्यगर्भ (ब्रह्मांडीय गर्भ) और विराट (समष्टि रूप) के चरणों में समझ आ गई, जिनसे सूक्ष्म से स्थूल तक असंख्य ब्रह्मांड विकसित होते हैं। इसी प्रकार चौदह लोक चेतना और अनुभव के स्तरों के प्रतीक नजर आ गए, उच्च लोक शुद्ध, प्रकाशमय जागरूकता के द्योतक, और निम्न लोक अधिक जड़ता एवं सीमितता के संकेतक। यहाँ ब्रह्मांड विज्ञान, मनोविज्ञान का दर्पण बन गया।

इस तरह, उन्हें संपूर्ण प्रकट सृष्टि क्षर के भीतर दिखाई दी, जिसका आधार अक्षर ब्रह्म है, और दोनों से सदा परे अक्षरातीत सत्य प्रगट हुआ। तारतम ज्ञान का लक्ष्य स्पष्ट हो गया– अपने निज स्वरूप का जागरण– यह पहचान कि आत्मा की गहरी अस्मिता परमधाम, अक्षरातीत परब्रह्म से जुड़ी है। अतः साधना का अंतिम पथ बाहर कहीं नहीं, भीतर खुलता है, जहाँ ज्ञान दृष्टि देता है, शांति आधार देती है, और प्रेम अस्तित्व को पूर्णता प्रदान करता है।

निजानन्द सद्गुरु की जागनी लीला के विस्तार में प्रथम सुन्दरसाथ श्री गांगजी भाई का योगदान अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा। जामनगर नवतनपुरी स्थित उनके गृह से सत्संग, संवाद और ब्रह्मज्ञान–चर्चा का क्रम प्रारम्भ हुआ। जो इस चेतना से जुड़े, वे सुंदरसाथ कहलाए। अपने जीवन के अंतिम वर्षों में श्री देवचंद्र जी ने इसे सत्संग, समता और जागरण–सेवा का प्रमुख केंद्र बनाया। परब्रह्म की दिव्य शक्तियों से युक्त नूतन ज्ञान 'तारतम' का बीज प्रगट होने से जामनगर नवतनपुरी कहलाया।

यद्यपि सत्संग के मार्ग में विरोध, अफ़वाहें और बाधाएँ उत्पन्न हुईं, पर सत्य में उनकी अडिगता ने कृपा को अदृश्य कवच की भाँति अनुभूत कराया। इसी गृह–सेवा की परंपरा के वातावरण में आगे चलकर श्री मिहिरराज को तारतम के अत्यंत गुह्य रहस्यों के बोध का मार्ग प्रशस्त हुआ। नवीन ज्ञान के प्रति ईर्ष्या से अफ़वाहें

फैलाकर पुलिस शिकायत तक की गई, किन्तु सिपाही गांगजी भाई के घर बैठे सद्गुरु तक पहुँच नहीं सके। इससे सुंदरसाथ के लिए यह संदेश स्पष्ट हुआ कि बाधाएँ क्षणिक हैं, सत्य स्थायी है। जो साधक श्रद्धा और सत्य में स्थित रहता है, उसके लिए कृपा ही उसका अदृश्य संरक्षण बन जाती है, जहाँ भय नहीं, अपितु स्पष्टता और विश्वास साधना की रक्षा करते हैं।

गांगजी भाई के यहाँ सत्संग-भवन में एक महत्वपूर्ण प्रसंग यह घटित हुआ कि जिसमें सद्गुरु ने एक निर्धन विधवा मुस्लिम स्त्री को आत्म-पहचान करा कर उसे तारतम ज्ञान प्रदान किया। यह श्री मिहिरराज की उपस्थिति में उन्हें समझाने के लिए कि दिव्य अनुभूति धर्म, जाति या वर्ग की सीमा में बंद नहीं रहती, वह सभी में समान रूप से संभव है। इससे सत्संग में समता-बोध और मानवीय गरिमा की स्थापना हुई। उन्होंने यह भी समझाया कि अखंड सुख केवल भीतर का अनुभव नहीं; उसे व्यवहार, विवेक और उत्तरदायित्व में उतारना आवश्यक है। परम और सापेक्ष सत्य के संतुलन से सामाजिक भेद मिटते हैं, क्योंकि सबमें वही एक चेतन सत्ता विद्यमान है, यही धर्म का प्रथम बोध है। उनकी वाणी और जीवन का संदेश अत्यंत स्पष्ट था कि समता, करुणा और उत्तरदायित्व ही जागृत चेतना के वास्तविक लक्षण हैं।

आत्म-जागृति से सुप्त चेतनाओं को जगाने वाले ''**बुद्धावतार**'' स्वरूप निजानंद स्वामी धनी श्री देवचन्द्र जी की जीवन-यात्रा बताती है कि साधना क्रमिक है, हर चरण सीढ़ी है, मंज़िल नहीं; और प्रेम तभी स्थायी होता है जब वह सत्य-ज्ञान से आलोकित हो। उन्होंने जागृति को त्रिविध कर्तव्य में ढाला- आत्म-परिष्कार (सेल्फ ड्यूटी), ''मैं सबका हूँ'' भाव से समुदाय-निर्माण (सोशल ड्यूटी) और भेदभाव/अन्याय के विरुद्ध संतुलित हस्तक्षेप, तथा प्रेम-क्षमा-सेवा द्वारा मानव एकता जगाना (नेशनल और ब्रह्मांडीय ड्यूटी)। उनका त्याग वस्तुओं का नहीं था, बल्कि स्वार्थ, आसक्ति और अहंकार का था, इसीलिए उनका जीवन कर्तव्य, बलिदान और समर्पण के तीन दीपों से प्रकाशित दिखाई देता है।

अपने जीवन के अंतिम 22 दिनों दरम्यान उन्होंने श्री मिहिरराज को आगे की जागनी लीला का दायित्व सौंपा; और देह-लीला के पश्चात् परब्रह्म का प्रेरक जोश तथा श्यामा जी की आनंद-शक्ति श्री मिहिरराज जी के भीतर प्रतिष्ठित होकर जागनी-लीला का क्रम आगे विस्तृत हुआ।

महामति श्री प्राणनाथ जी : जीवन की आत्म-जागरण यात्रा

महामति श्री प्राणनाथ का जीवन घटनाओं का क्रम नहीं, बल्कि चेतना के विकास की एक जीवंत यात्रा है। बाल्यकाल की जिज्ञासा से आरम्भ होकर सतगुरु कृपा, आत्मबोध और तारतम ज्ञान की प्रौढ़ता तक उनकी साधना निरंतर आंतरिक रूपांतरण का मार्ग बनी। उन्होंने आराम, प्रतिष्ठा और जड़ विश्वासों से ऊपर उठकर सत्य-खोज, करुणा और विवेकपूर्ण जीवन को अपनाया।



'महामति' पद और 'प्राणनाथ' नाम उनके जीवन के उस निर्णायक परिवर्तन का प्रतीक है, जहाँ व्यक्तिगत साधना दिव्य दायित्व में रूपांतरित हुई। उनका संदेश स्पष्ट था, धर्म भय, कर्मकांड या संकीर्ण पहचान नहीं, बल्कि प्रेम, विवेक और मानव एकता का मार्ग है। सच्चा विकास बाह्य उपलब्धियों से नहीं, बल्कि अहंकार और सीमित दृष्टि के मरण से जन्म लेने वाली जागृति से होता है।

श्री कुलजम स्वरूप-तारतम वाणी- इसी समग्र दृष्टि की अभिव्यक्ति है। बहुभाषिक स्वरूप में अवतरित यह वाणी आज भी लाखों साधकों के लिए ज्ञान, चिंतन और आत्म-जागरण का प्रेरक स्रोत है। महामति प्राणनाथ जी का जीवन हमें स्मरण कराता है कि वास्तविक सार्थकता भीतर जागने, प्रेम में स्थिर होने और जगत में शीतलता फैलाने में है।

महामति का दैहिक नाम श्री मिहिरराज ठक्कर (मेहराज ठाकुर) था। उनका प्रादुर्भाव 7 अक्टूबर 1618 ई. को जामनगर, गुजरात में एक धर्मनिष्ठ वैष्णव क्षत्रिय परिवार में हुआ। बाल्यकाल से ही उनका स्वभाव गंभीर, अंतर्मुखी और आध्यात्मिक

संस्कारों से युक्त था। सांसारिक आकर्षणों की अपेक्षा उन्हें सत्य और आत्म-तत्त्व से जुड़े प्रश्न अधिक प्रेरित करते थे।

परिवार के माध्यम से निजानन्द सद्गुरु श्री देवचन्द्रजी की लीलाओं का श्रवण उनके जीवन का निर्णायक प्रेरक बना। अल्पायु में ही सद्गुरु-दर्शन की तीव्र आकांक्षा जागी और 1630 ई. में उनका सद्गुरु से मिलन हुआ। बारह साल की आयु में तारतम-दीक्षा प्राप्त कर उन्होंने सेवा, साधना और ब्रह्मविद्या के पथ को जीवन का आधार बना लिया।

लगभग 22 वर्ष की आयु में श्री मिहिरराज का विवाह फूलबाई से हुआ। इसी बीच सद्गुरु के आदेश से ईराक की कठिन विदेश यात्रा उनके जीवन की पहली बड़ी परीक्षा सिद्ध हुई, जहाँ उन्होंने सेवा, धैर्य और विवेक का परिचय दिया। स्वदेश लौटने पर झूठे आरोप, कारावास, सामाजिक अविश्वास और उपेक्षा जैसी परिस्थितियों से भी गुजरना पड़ा। किंतु इन सभी संघर्षों के बीच उनकी आस्था, गुरु-निष्ठा और आत्मिक संतुलन अडिग रहे। अंततः सद्गुरु के बुलावे पर उन्होंने राजकीय दायित्व त्यागकर स्वयं को पूर्णतः गुरु-सेवा और जागनी मिशन हेतु समर्पित कर दिया। उनका जीवन यह दर्शाता है कि सच्ची आध्यात्मिकता श्रद्धा, सेवा, सहनशीलता और निरंतर आत्म जागरण की प्रक्रिया है।

श्री मिहिरराज ने धर्म बनाम करुणा का संघर्ष झेला। अपने विवाहित गृहस्थ जीवन में एक मार्मिक घटना घटी, निष्कासित, भूखे सुंदरसाथ गंगादास को उनकी धर्मपत्नि श्री फूलबाई ने करुणावश अतिथि भाव से भोजन कराया। इस मानवीय सेवा को अनुशासन-विरुद्ध मानकर श्री मिहिरराज को धर्म और पत्नी के बीच चयन की कठोर परिस्थिति में रखा गया। अंततः फूलबाई ने तप का मार्ग चुना। परंपरा के अनुसार, वही आत्मा अपना प्रेम सेवा धर्म निभाने हेतु आगे तेजकुंवरी के रूप में पुनः प्रकट हुई-यह प्रसंग करुणा को धर्म का प्राणतत्त्व स्थापित करता है।

सद्गुरु के धामगमन के बाद श्री मिहिरराज ने जामनगर में दीवान-पद स्वीकार किया, पर ईर्ष्यावश उन पर निराधार आरोप लगाकर कारावास दिया

गया। यह काल उनके लिए आत्म-रूपांतरण का चरण बना। फूलबाई जैसी सेवाभावी पत्नी को गँवाना भी काफी नहीं था, कि कारावास झेलने की स्थिति बनी। जीवन की सब से काली रात्रि को सब से प्रकाशित अखंड रास लीला के आनंद में परिवर्तित किया। एकांत में सद्गुरु की याद और विरह में दिव्य प्रेरणा से तारतम वाणी के रास, प्रकाश, षटऋतु जैसे ग्रंथ प्रकट हुए, जिन्हें जिन्हें उनके छोटे भाई उद्धव जी ने लिपिबद्ध किया। कारावास 'प्रबोध-पुरी' बन गया-बंधन नहीं, जागरण की भूमि। जब जाम राजा को अपनी रानी के माध्यम से ज्ञात हुआ कि श्री मिहिरराज बेगुनाह हैं, तो उन्होंने मुक्त कर उनकी क्षमा माँगी और उन्हें शिरोपाव देकर सम्मान सहित बिदा किया।

इसी बीच जूनागढ़ के पास एक नया गाँव बसाने हेतु जाना हुआ। जामनगर से जूनागढ़ की इस यात्रा दरम्यान तेजकुंवरी ने उन्हें आत्मिक पहचान कर अपने पिताश्री की सहमति से पति रूप में स्वीकारा। श्री प्राणनाथजी की विनय, सेवा और जागनी भावना से प्रेरित होकर अनेक सुंदरसाथ ने निजानंद मार्ग अंगीकार किया। भागवताचार्य हरजी व्यास के साथ सत्संग प्रसंग में, श्री प्राणनाथजी ने लंबे समय तक पहले विनम्र श्रोता बनकर श्रवण किया; तत्पश्चात तारतम ज्ञान से उनका आत्मबोध पूर्ण कराया। यह चरण उनके जीवन-संदेश को पुष्ट करता है- सच्चा ज्ञान विनय, करुणा और चेतना जागरण से फलित होता है।

वि.सं. 1720 (1663-64 ई.) में जामनगर पर संकट के समय श्री प्राणनाथजी ने दीवान-पद स्वीकार कर कूटनीति से जन-धन की रक्षा की। कर-अभाव के कारण उन्होंने अहमदाबाद में स्वयं को प्रस्तुत कर स्वेच्छा से कारावास स्वीकार किया-जन कल्याण हेतु। सेवाभावी सुंदरसाथ कानजीभाई ने अद्वितीय साहस दिखाते हुए उन्हें मुक्त कराया और स्वयं बंदी बने। लेकिन परमात्मा की कृपा से वे भी चमत्कारिक रूप से बंधन-मुक्त हुए। इस प्रसंग को श्री प्राणनाथजी ने आत्म-निरीक्षण और विनय की सूक्ष्म कसौटी के रूप में देखा, क्योंकि कानजीभाई ने उन्हें कारावास से निकल जाने के लिए मजबूर किया और उन्हें उनके सेवाभाव का सम्मान रखते हुए वहाँ से निकल जाना पड़ा।

दीव-बंदर से जागनी लीला प्रारंभ

सन् 1666-67 में श्री प्राणनाथ जी अहमदाबाद से प्रस्थान कर दीव-बंदर पहुँचे, जहाँ जयरामभाई कंसारा के निवास से जागरण-कार्य तीव्र हुआ। विरोधों के बीच लक्ष्य स्पष्ट रहा-निष्ठावान सुंदरसाथ समाज का निर्माण किया। इसी काल में अरबी लुटेरों द्वारा अपहरण की घटना से प्रेरित होकर वे मस्कत की ओर बढ़े। धर्म-रक्षा की समग्र दृष्टि से अत्याचारपूर्ण वातावरण में उन्होंने करुणा और साहस, समन्वय और प्रतिरोध-इन दोनों को धर्म के पूरक तत्व के रूप में जिया। शास्त्र उनके लिए शस्त्र बने; सत्य, न्याय और मानव-मर्यादा की रक्षा ही ध्येय रहा। मस्कत-यात्रा और वापसी के दौरान ठट्ठानगर में सत्संग से व्यापक जागरण हुआ। चिंतामणि और लक्ष्मण सेठ (लालदास जी) ने तारतम ज्ञान ग्रहण कर एवं ज्ञान और पद का अहंकार त्याग कर स्वरूप-बोध पाया। वैभव-हानि के बाद लालदासजी का समर्पण अहंकार-त्याग और सेवा-मार्ग का प्रतीक बना। मस्कत में महावजी भाई से संगठित जागरण आरम्भ हुआ। सेवा-अहंकार त्याग का बोध दिया। अब्बास बंदर में भैरव सेठ नाम के बड़े व्यापारी साथी के माध्यम से बंदियों की मुक्ति तथा करुणा-सेवा एवं व्यसन-मुक्ति का एक उत्कृष्ट आदर्श स्थापित हुआ। संकटवश वहाँ से प्रस्थान भी दिव्य योजना का अंग बना। वापसी में नलिया-बंदर में बिहारीजी द्वारा सुन्दरसाथ समाज से निष्कासित धाराभाई को पुनः समुदाय में सम्मिलित कर यह सिद्धांत पुष्ट किया कि धर्म का आधार जाति नहीं, आत्म-जागृति और सत्यनिष्ठा है। समावेशन को धर्म का प्राणतत्त्व बताया।

जाग्रत चेतना से संभावित गिरफ़्तारी का आभास होते ही उन्होंने दिव्य संकेत का अनुसरण करते हुए अपना यात्रा-मार्ग परिवर्तित कर दिया। जलपोत को आगे बढ़ने दिया और स्वयं पैदल चल पड़े। उनकी इस दूरदर्शिता और विवेकपूर्ण निर्णय के कारण सभी सुन्दरसाथ सुरक्षित रहे। यात्रा के कष्ट यात्रा के कष्ट में ''धोरीडा मा मुके तारी धूसरी'' कीर्तन प्रकट हुआ जिससे धैर्य, दायित्व और लक्ष्य-निष्ठा का संदेश स्पष्ट हुआ। अंततः सन् 1672 ई. में वे सूरत पहुँचे। वहाँ वे लगभग सत्रह माह रहे। उस समय स्वतंत्र जागरण की सशक्त धारा प्रारंभ हुई। उन्होंने करुणा, समता और आत्मबोध को धर्म का आधार बताया। शिवजी भाई, रामजी भाई सहित अनेक सुंदरसाथ जागृत हुए। इनके तर्क से नहीं, प्रत्यक्ष अनुभूति से विद्वानों पर गहरा प्रभाव पड़ा। 'कलश' ग्रंथ का प्रकटन इसी काल की शिखर घटना रही। आगे की यात्रा में करीब 500 सुंदरसाथ उनके साथ जागनी अभियान यात्रा में निकल पड़े। कई तो परिवार सहित ही उनके साथ चल दिए। यहीं से

जागनी अभियान ने एक नए महा-मंगलमय चरण में प्रवेश किया। इस ऐतिहासिक और आध्यात्मिक महत्त्व के कारण सूरत 'महामंगलपुरी' के नाम से विख्यात हुई।

सूरत से अहमदाबाद, सिद्धपुर होते हुए वे मेड़ता राजस्थान पहुँचे। वहाँ उन्होंने सत्संग में धर्म-रक्षा का उद्घोष किया। मेड़ता में जैन तांत्रिक लाभानन्द यति के तंत्रविद्या के दुरुपयोग और अहंकार का खंडन कर सत्य-करुणा की विजय प्रतिपादित की। औरंगज़ेब के अत्याचारों के बीच राजाओं-क्षत्रियों को धर्म-रक्षा हेतु निर्भीक आह्वान किया। प्रेम, करुणा, सत्य और अहिंसा को धर्म का सार बताया। यहाँ हिंदू-इस्लाम की आंतरिक एकता पर उनकी दृष्टि और अधिक स्पष्ट हुई।

भारतीय इतिहास के औरंगज़ेब काल में ऐसा निर्भय धर्मयुद्ध और समन्वय का खुला आह्वान देने वाले एक मात्र महावीर महामति प्राणनाथ थे। शाही भय के वातावरण में उन्होंने सत्य-पथ को ही धर्मयुद्ध कहा। फल-चिंता से परे उन्होंने कर्तव्य-निष्ठा को आगे रखा। गोकुल, मथुरा, आगरा में सत्संगों से अद्वैतवाद और परम सत्य प्रकाशित एवं तारतम्य-केंद्रित समन्वय का संदेश दिया। दिल्ली में कुरआन के गूढ़ार्थ पर आधारित 22 प्रश्नों का मसौदा तैयार करवाया और अधिकारियों तक पहुँचाया। उपयुक्त समय और साधनों की प्रतीक्षा के बीच धर्म-रक्षा, स्वाभिमान और जागरण का अभियान निरंतर चलता रहा।

श्री विजयाभिनंद बुद्ध निष्कलंक

निजानंद दर्शन चेतना के क्रमिक उत्कर्ष, प्रेममय अद्वैत और परमधाम स्थिति की ओर ले जाने वाला समग्र आध्यात्मिक प्रतिपादन है। आज से 346 वर्ष पूर्व सन् 1678 ई., संवत् 1735, चैत्र सुद 1 को श्री प्राणनाथ जी हरिद्वार पधारे थे। वहाँ उपस्थित समस्त हिन्दू धर्माचार्यों, सम्प्रदायाचार्यों और दार्शनिकों के साथ उनका ऐतिहासिक शास्त्रार्थ और उन्होंने इस महासंगम को हिन्दू एकता के एक निर्णायक अवसर के रूप में ग्रहण किया। इतने विशाल रूप में सर्व प्रथम बार ही तारतम ब्रह्म ज्ञान की निराकार के पार के भी पार परब्रह्म के स्वरूप, धाम और लीला की वास्तविकता प्रस्तुत हुई। इससे प्रभावित होकर वहाँ उपस्थित सभी ज्ञानीजनों ने उन्हें श्री विजयाभिनंद बुद्ध निष्कलंक के रूप में स्वीकार किया। आध्यात्मिक जगत का यह महामाहिमावान प्रसंग है। इस प्रसंग पर प्रथम बार निजानंद संप्रदाय की पद्धति प्रस्तुत/प्रकासित हुई। तारतम वाणी के महत्वपूर्ण सिद्धांतों सहित सम्प्रदाय के मुख्य सिद्धांतों का इस पुस्तिका में परिचय दिया गया है।

चार मास के गहन संवाद में उन्होंने देखा कि सभी सम्प्रदाय वस्तुतः एक ही सत्य के भिन्न-भिन्न अंगों का वर्णन कर रहे हैं। जैसे अंधे मित्रों ने हाथी के अलग-अलग अंगों को छूकर भिन्न-भिन्न अनुभव किए- वैसे ही प्रत्येक आचार्य उसी का वर्णन कर रहा था जहाँ तक उसकी पहुँच थी। तारतम ज्ञान वह समग्र दृष्टि है जो इन सबके अनुभवों में निहित तारतम्य को पहचान लेती है-**'सो तेता ही बोलिया, जो गया जहाँ लो चल'** जो जिस लोक से आया, उसने उसी का वर्णन किया। यह परस्पर विरोध नहीं, पूर्णता की क्रमबद्ध सीढ़ियाँ हैं। पाताल से परमधाम तक का यह तारतम्य जब चित्त में उतरता है, तब परमेश्वर का विराट स्वरूप प्रकट होता है। षट्दर्शनों का सम्मिलित निष्कर्ष था-जीवात्मा चेतन स्वरूप है; अन्तःकरण से संबंध तोड़ने पर वह अपने सहज शान्त चिद्-स्वरूप में स्थित हो जाती है। किन्तु तारतम ज्ञान यहीं से आगे का द्वार खोलता है- शान्त चिद्-स्वरूप में ठहरना अंतिम मंजिल नहीं; वहाँ से परमधाम की प्रेमानंद लीला में प्रवेश की यात्रा अभी शेष है।

महामति की प्रतीकात्मक प्रस्तुति और तारतम्य-केंद्रित समन्वयकारी दृष्टि से प्रभावित होकर समस्त विद्वज्जनों ने उन्हें '**विजयाभिनन्द निष्कलंक बुद्ध**' के रूप में स्वीकार किया। इसी ऐतिहासिक अवसर पर निजानंद सम्प्रदाय की विधिवत् पद्धति पहली बार सार्वजनिक रूप में प्रकट हुई, जो प्रेममय अद्वैत, चेतना के क्रमिक उत्कर्ष और परमधाम-स्थिति की ओर ले जाने वाला समग्र आध्यात्मिक मार्ग है।

तत्पश्चात, उन्होंने औरंगज़ेब तक सत्य पहुँचाने का संकल्प लिया। उनका उद्देश्य था-इस्लाम के करुणामय, मानवतावादी मर्म को अलग कर मुग़ल सम्राट तक पहुँचाना। कट्टरता और दरबारियों के भय से उससे प्रत्यक्ष संवाद संभव न हो सका। लेकिन बारह सुन्दरसाथ ने भेष बदल कर उन तक संदेश पहुँचा दिया। अनूप शहर में ग्रंथ-अध्ययन और 'सनंध' वाणी के अवतरण के माध्यम से धर्मों की भीतरी एकता का संदेश प्रसारित हुआ। फारसी अनुवाद सहित पदों द्वारा सत्य प्रस्तुत किया गयाा। मौलवियों से संवाद में करुणामय अर्थ रखे गए; तर्क प्रभावी रहा पर सत्ता-कठोरता अडिग रही। पत्राचार, अपील और षड्यंत्रों के बीच धैर्य, विनय और सत्य-निष्ठा का आदर्श उजागर हुआ।

समाज-जागरण और संगठनात्मक अभियान

लेकिन जैसे सत्ता के केंद्र में सत्य की परीक्षा अवश्य होती है, अनुभव हुआ कि केवल उपदेश पर्याप्त नहीं; अन्याय के प्रतिकार हेतु संगठित चेतना भी परम आवश्यक है। अतः आमेर, सांगानेर, उदयपुर आदि में राजाओं और जनमानस को स्वाभिमान, एकता और धर्म-समन्वय का संदेश दिया; भय और संदेहों के बीच भी जागनी अभियान आगे बढ़ता रहा। उनकी वाणी में वेद-कुरान सहित विविध धर्मग्रंथों का निर्भीक समन्वय प्रस्तुत हुआ। विरोध के बावजूद सत्य-पथ पर वे और सभी सुन्दरसाथ अडिग रहे। कुछ मुग़ल सेनापतियों का हृदय-परिवर्तन भी हुआ। कुरान के हिंदवी अनुवाद का कार्य भी सम्पन्न हुआ। करुणा-क्षमा की दृष्टि ने व्यापक समभाव और जागरण का वातावरण अपनी दिव्य वाणी द्वारा निर्मित किया।

जाति, अंधविश्वास और भाग्यवाद से जकड़े समाज में उन्होंने चेतना, विवेक और धर्मरक्षा का संदेश दिया। राजाओं को प्रजापालन व नैतिक उत्तरदायित्व के लिए प्रेरित किया। मुकुंद स्वामी के माध्यम से बूंदी नरेश भावसिंह हाड़ा तक यह संदेश पहुँचा; ज्ञान और विनय से प्रभावित होकर राजा ने उनके प्रति सम्मान प्रकट किया और अधर्म का प्रतिकार किया। उज्जैन में शैव-वैष्णव समन्वय द्वारा व्यापक जन-जागरण हुआ।

औरंगाबाद के राजा भावसिंह ने उनका आदरपूर्वक स्वागत किया। सत्संगों में **'सोई खुदा, सोई ब्रह्म'** की समन्वयकारी दृष्टि रखी गई। काजियों से संवाद में निराकार-साकार तथा क्षर-अक्षर-अक्षरातीत का दार्शनिक सामंजस्य स्पष्ट किया। शंकाओं का समाधान हुआ, यद्यपि विरोध भी रहा। भावसिंह के निधन के बाद उन्होंने अन्य नगरों में धर्मसभाएँ जारी रखीं। वहाँ से वे रामनगर की ओर चले। केतकी नदी के तट पर सत्संग के माध्यम से वेद-कुरान-इंजील-तौरेत की एकत्व-दृष्टि प्रस्तुत की। प्रारंभिक असहजता और राजकीय उदासीनता के बीच वे अडिग रहे। शाही सिपहसालार शेख खिदर सत्संग से प्रभावित होकर आत्मबोध की ओर उन्मुख हुआ और सत्य-संदेश पहुँचाने का संकल्प लेकर लौटा। इस घटना से प्रेरित होकर देवकरण बुंदेला ने छत्रसाल से भेंट की आकांक्षा जागृत की।

महामति प्राणनाथ जी-छत्रसाल मिलन और पन्ना-लीला प्रसंग

रामनगर से गढ़ा की ओर प्रस्थान करते समय महामति प्राणनाथजी एवं सुंदरसाथ संघ को गुलाम मुहम्मद और उसके सैनिकों की ओर से बाधाओं एवं दबाव का सामना करना पड़ा। बीतक के अनुसार सैनिकों ने उन्हें रोकने का प्रयास किया, किंतु सुंदरसाथ के धैर्य, साहस तथा महामति के ज्ञानपूर्ण एवं शांतिपूर्ण व्यवहार के कारण उनका उद्देश्य सफल नहीं हो सका और अंततः वे लौट गए। गढ़ा पहुँचने पर महामति प्राणनाथजी ने महाराजा छत्रसाल की अंतर्निहित भावना का बोध कर उन्हें संदेश भेजा, जिससे दोनों के मध्य भेंट का मार्ग प्रशस्त हुआ। तत्कालीन परिस्थितियों के कारण छत्रसाल स्वयं तत्काल उपस्थित न हो सके, किंतु उन्होंने महामति को अपने राज्य पन्ना पधारने का आदरपूर्ण निमंत्रण भेजा।

पन्ना में किलकिला नदी के किनारे महामति ने डेरा डाला। मऊ के एक सत्संग में छत्रसाल वेश बदलकर आए, जहाँ महामति ने उन्हें पहचान कर आत्म-परिचय कराया। छत्रसाल ने महामति के उपदेशों को अपने जीवन का सार मानकर उनके प्रति पूर्णतः शरणागत हुए और श्रद्धा से उन्हें नमन किया। बाद में उन्होंने चौपड़ा में महामति और उनकी सहधर्मिणी श्री बाईजूराज का सम्मानपूर्वक स्वागत किया। सामंतों की शंकाओं के बावजूद छत्रसाल का विश्वास अडिग रहा और महामति-छत्रसाल का यह संगम आध्यात्मिक एवं ऐतिहासिक रूप से निर्णायक सिद्ध हुआ।

चौपड़ा की हवेली में महामति प्राणनाथ जी ने छत्रसाल को धर्मोपदेश देकर परंपराओं से हटकर स्वयं उनका राजतिलक किया और उन्हें महाराजा घोषित किया। महामति के इस निर्णय का शाही दरबार ने विरोध किया, पर छत्रसाल सद्गुरु के आदेश को ही सर्वोच्च मानकर अडिग रहे। महामति के मार्गदर्शन में उन्होंने राष्ट्रीय स्वतंत्रता का संकल्प लिया। विजयादशमी पर महामति ने उन्हें विजयी तलवार दी और जनकल्याण हेतु ईश्वरीय धन के सदुपयोग का उपदेश दिया।

श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम, पन्ना को सेवा और स्वावलंबन का केंद्र बनाना

दिल में लिया। छत्रसाल ने सद्गुरु महामति प्राणनाथ जी के चरणों में बीड़ा उठाकर तन–मन–धन को जनकल्याण, राष्ट्रसेवा और धर्मरक्षा हेतु समर्पित करने की शपथ ली, जो आज भी विजयादशमी पर परंपरा रूप में निभाई जाती है। उन्होंने नदी–तट का क्षेत्र ताम्रपत्र द्वारा महामति और उनके सुंदरसाथ को दान दिया। वहाँ टेकरी पर सभा–भवन और पर्णकुटी के साथ पद्मावतीपुरी धाम की स्थापना हुई। लगभग पाँच हजार ब्रह्ममुनि सुन्दरसाथ ने यहाँ निवास कर धर्ममय जीवन अपनाया। वे महामति के सान्निध्य में साधना और धार्मिक चर्चाओं में अहर्निश संलग्न रहते हुए समाज–सेवा और जनकल्याण कार्य में संलग्न रहे।

अपने दरबार की शंकाओं के समाधान हेतु महाराजा छत्रसाल ने पन्ना में कुरान–पुराण धर्मगोष्ठी का आयोजन करवाया। महोबा के काजी अब्दुल रसूल को बुलाया गया। सृष्टि–उत्पत्ति के विषय में उनके प्रश्नों के समक्ष काजी निरुत्तर रहा। महामति ने कुरान में वर्णित सृष्टि–तत्त्व का गूढ़ार्थ स्पष्ट किया; काजी ने उनकी विद्वत्ता स्वीकार कर उनके प्रति सम्मान प्रकट किया। साथ ही प्रकांड हिन्दू पंडितों के साथ उननिषद–वेदांत–गीता संवाद में उन्होंने शुष्क बौद्धिकता से ऊपर प्रेममय भक्ति का महत्त्व प्रतिपादित किया। विद्वानों ने भक्ति और ज्ञान के एकीकृत मार्ग को स्वीकार किया। पन्ना में सुंदरसाथ समाज का स्वावलंबी, श्रम–आधारित जीवन आदर्श बना। महामति ने स्पष्ट किया कि धर्म–मार्ग पलायन नहीं, स्वावलंबन और साधना का संपूरक है। महाराजा छत्रसाल ने विनम्रतापूर्वक सुन्दरसाथ संघ के लिए कई परगनों की आमदनी समर्पित की।

उन्होंने राजनीतिक मुक्ति के साथ आध्यात्मिक समन्वय को जोड़ा। विभिन्न अभियानों–संवादों में अद्वैत–एकेश्वरवाद और सर्वधर्म समभाव का संदेश दिया। राजा बसंत सुर्की के प्रस्ताव पर चित्रकूट के प्रवास में क़यामतनामा ग्रंथ का अवतरण पूर्ण हुआ। फिर पन्ना वापिस लौटे। अंतिम वर्षों में साहित्य, संगीत और भक्तिधारा का उत्कर्ष हुआ। बाईजूराज तेजकुंवर के साथ धर्म–जागरण की अखंड साझेदारी स्मरणीय रही। दलित–उपेक्षित सहित समस्त समाज में समता, करुणा और एकता का बीज बोया। ब्रह्मयोग समाधि में लीन होने के पश्चात, तारतम वाणी और बीतक परंपरा उनके संदेश की जीवित धरोहर बनी–

'सुख शीतल करूं संसार।'

महामति प्राणनाथ जी : राजनीतिक दर्शन

महामति प्राणनाथ जी का राजनीतिक दर्शन आध्यात्मिक दृष्टि और व्यावहारिक शासन-बुद्धि का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत करता है। उन्होंने धर्म को कर्तव्य-बोध, अर्थ को पवित्र आजीविका, काम को उत्तरदायित्वपूर्ण जीवन-ऊर्जा और मोक्ष को सतत आत्म-साधना के रूप में परिभाषित किया। इस प्रकार उनके लिए राज्य संचालन केवल शक्ति-प्रदर्शन नहीं, बल्कि नैतिक चेतना का सामाजिक विस्तार था।

ध्रोल में उनके प्रशासन का केंद्र संवाद, सर्वसम्मति और जन-कल्याण रहा। निर्णय प्रक्रिया में सहभागिता और पारदर्शिता को महत्व देने से उत्पादन, व्यापार, वित्त, न्याय, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में उल्लेखनीय उन्नति हुई। आर्थिक समृद्धि के साथ उन्होंने साधनों की शुचिता को अनिवार्य माना-क्योंकि उनके अनुसार अपवित्र साधनों से प्राप्त विकास अंततः असंतुलन और अविश्वास को जन्म देता है। प्रशासनिक सुधारों और राजकोषीय अनुशासन के कारण स्वार्थ-प्रेरित विरोध भी उत्पन्न हुआ, पर वे प्रमाण और सत्य के आधार पर अडिग रहे। अनैतिक प्रभावों से शिथिल होती राज्य-सुरक्षा के अनुभव ने उनके मूल्यपरक राज्यदर्शन की आवश्यकता को और अधिक स्पष्ट किया। उन्होंने दिखाया कि जब शासन नैतिकता से विचलित होता है, तब बाहरी संकटों से अधिक आंतरिक विघटन राज्य को दुर्बल बनाता है।

उनकी दृष्टि में राज्य का मूल उद्देश्य प्रजा-हित और लोकमंगल है। इसी सिद्धांत पर उन्होंने लोक उपयोगी निर्माण, सुव्यवस्थित बसाहट और जनकल्याणकारी योजनाओं को प्राथमिकता दी। अन्याय, षडयंत्र और असत्य के विरुद्ध उन्होंने साहसपूर्वक हस्तक्षेप किया, भले ही इसके लिए व्यक्तिगत कष्ट या राजकोषीय हानि सहनी पड़े। उनके लिए सत्य की प्रतिष्ठा सत्ता से ऊपर थी।

अंततः महामति का आदर्श शासन वही है जहाँ नैतिकता, संवाद, जन-सहभागिता और साधनों की पवित्रता-ये चार स्तंभ मिलकर राज्य और समाज में

स्थायी शांति, विश्वास और संतुलित उन्नति सुनिश्चित करें। उनका राजनीतिक दर्शन यह सिखाता है कि शासन की वास्तविक शक्ति नियंत्रण में नहीं, बल्कि न्याय, करुणा और विवेक से अर्जित सामूहिक विश्वास में निहित होती है।

विरोध और षडयंत्रों के बीच भी उन्होंने सतर्कता और विवेक को अपनाया। जागरण-यात्रा के माध्यम से राजाओं को आदर्श राज्यदर्शन से परिचित कराया और धार्मिक विभेदों के पार एकत्व का संदेश दिया। संवाद के मार्ग बंद होने पर अन्याय के प्रतिकार हेतु संगठित शक्ति की आवश्यकता पर बल दिया।

राजा भावसिंह हाड़ा से प्रेरक संपर्क के बाद छत्रसाल से मिलन निर्णायक सिद्ध हुआ। गुरु-मार्गदर्शन और वीर-नेतृत्व के संगम से आर्थिक सुदृढ़ता, संगठित सेना और नैतिक शासन की नींव पड़ी, जिससे स्वतंत्र मुक्ति और स्थिर राज्य-व्यवस्था स्थापित हुई।

आदर्श राजा में साहस, संयम, न्याय, नीति-कौशल और करुणा का संतुलन आवश्यक बताया। दरबार में विद्वानों और कलाओं के संरक्षण को आध्यात्मिक-सांस्कृतिक उन्नति का साधन माना। विकेंद्रीकृत न्याय-व्यवस्था और जनकल्याण आधारित शासन को स्थायी प्रगति का आधार स्थापित किया।

महामति श्री प्राणनाथ : सामाजिक दर्शन
जातिवाद-विरोध, आंतरिक पवित्रता और जीवंत धर्म

महामति प्राणनाथ जी की दृष्टि में धर्म का आधार जन्म, वर्ण या जाति नहीं, बल्कि गुण, चरित्र और निर्मल हृदय है। उन्होंने वर्ण-जाति आधारित भेदभाव को स्पष्ट रूप से अस्वीकार करते हुए यह प्रतिपादित किया कि बाह्य पहचान यदि अहं और विभाजन को जन्म दे, तो वह धर्म का स्वरूप नहीं रह जाती। छुआछूत और कृत्रिम श्रेष्ठता-बोध पर प्रहार करते हुए उन्होंने समानता, करुणा और आत्म-गरिमा का मार्ग सुदृढ़ किया।

उनका बल अंतःकरण की शुद्धता पर था–जाति, वेश या सामाजिक प्रतिष्ठा से परे सच्ची पवित्रता भीतर की जागरूकता, विनय और सत्यनिष्ठ आचरण से प्रकट होती है। इसी भावभूमि पर उन्होंने नारी सम्मान को उच्च स्थान दिया। स्त्री को शक्ति, प्रेम और भक्ति का केंद्र मानते हुए उन्होंने उसे आध्यात्मिक गरिमा और समान आदर का अधिकारी माना। गृहस्थ जीवन को उन्होंने त्याज्य नहीं, बल्कि साधना का सशक्त माध्यम बताया। उनके अनुसार धर्म का सार संसार से पलायन में नहीं, बल्कि संबंधों, कर्तव्यों और व्यवहार के बीच आंतरिक संतुलन और शुचिता बनाए रखने में है। दिखावटी धार्मिकता के स्थान पर शुद्ध आचरण, करुणा और उत्तरदायित्व को सर्वोपरि रखा गया।

महामति ने शास्त्रीय व्यवस्थाओं को जड़ और अंतिम न मानकर समय-सापेक्ष माना। उन्होंने विवेकपूर्ण पुनर्विचार का आग्रह किया, ताकि धर्म जीवन से जुड़ा रहे, चेतना को ऊर्ध्व करे और समाज में समरसता स्थापित करे। उनकी समन्वयवादी दृष्टि का निष्कर्ष स्पष्ट है : मानवता, सत्य और जीवंत धर्म–यही वास्तविक आध्यात्मिक प्रगति के स्तंभ हैं।

महामति श्री प्राणनाथ जी का दिव्य संदेश

बोली जुदी सबन की, और सबका जुदा चलन ।
सब उरझे नाम जुदे धर, पर मेरे तो कहना सबन ।।

''भाषाओं की विभिन्नता स्वाभाविक है और सबको अपनी मातृभाषा प्रिय भी होती है, किन्तु भाषा–भेद की संकीर्णता एवं कट्टरता ही मानव समाज में धार्मिक एवं सामाजिक भेदभाव का मुख्य कारण है। उसी प्रकार हर संस्कृति में रीति–रिवाज भी भिन्न हो सकते हैं। आत्मजागृति न होना आपसी उलझन का कारण है। इस मर्म को हर मानव के अन्तःकरण में अंकित कर देना ही मेरा लक्ष्य है।''

छोड़ गुमान सब मिलसी, ए जो देखत हो जहान ।
जात-पांत न भांत कोई, एक खान पान और गान ।।

''मुझे विश्वास है कि ऐसा स्वर्ण युग आयेगा जब मानव समाज अहंजनित अज्ञानता को छोड़कर, जात-पात के भेद को भूलकर सहृदयता से आनन्दित रहेगा।''

सास्त्र ले चले सतगुरु सोई, बानी सकल को एक अर्थ होई ।
सब सयानों की एक मत पाई, पर अजान देखे रे जुदाई ।।

''सद्गुरु वही है जो समस्त धर्मशास्त्रों की बुनियादी एकता को प्रधानता देते हुए उनके मौलिक आशयों की समानता की उद्घोषणा करे। अज्ञानी जनों को दार्शनिकों की जिन विविधतापूर्ण बातों में विरोधाभास दिखाई देता है, उनमें सद्गुरु एकता के दर्शन कराता है।''

सुन्दरसाथ के लिए धर्म आधारित सुखी जीवन हेतु अभ्यास :

(अ) सार्वभौमिक नैतिकता के पांच अभ्यास (यम) :

1. सभी लोगों, जानवरों और प्रकृति के प्रति दयालु भाव
2. अपने और दूसरों के प्रति ईमानदार (आसक्तियों से मुक्त) रहना
3. जो अपना नहीं है उसे ग्रहण न करते हुए उदार रहना
4. सभी रिश्तों में अपनी सीमाओं के प्रति जाग्रत रह कर उनका पालन करते हुए अपनी शक्ति का दुरुपयोग न करना और
5. लालच एवं नकारात्मक सोच से दूर रहना। जो जैसा है, उसे परमात्मा की इच्छा समझ कर वैसे ही स्वीकार करना।

(ब) व्यक्तिगत अभ्यास के पाँच अभ्यास (नियम) :

1. स्वच्छ, शुद्ध और संपूर्ण जीवन जीना।
2. संतोषी और आभारी रह कर अभी खुश होना चुनना।
3. आत्म-अनुशासन से उत्साह की लौ जलाये रखना।
4. स्व का अध्ययन शास्त्र ज्ञान एवं आत्म-अनुभूति के आधार पर जारी रखना।
5. परमात्मा की इच्छा एवं अपने उच्च स्व के प्रति पूर्णतः समर्पित रहना।

निजानन्द दर्शन : चेतना-विकास की एक जीवंत यात्रा

1. प्रारम्भ : खोज से जागरण तक

निजानन्द दर्शन को केवल एक मत या सिद्धांत नहीं, बल्कि चेतना-विकास की जीवंत और अनुभवमयी यात्रा के रूप में समझा जाता है। यह यात्रा देह और मन की सीमित पहचान से आरम्भ होकर आत्मबोध तक पहुँचती है और अंततः अक्षरातीत परब्रह्म के प्रेमानन्द में प्रतिष्ठित होती है। इसका आरम्भ एक मूल प्रश्न से होता है- मैं कौन हूँ? मेरा वास्तविक धाम क्या है? मेरा प्रियतम कौन है? यही निरंतर खोज तारतम्य-विकास का आधार बनती है।

2. तारतम्य का सिद्धांत : समावेशी अद्वैत

यह दर्शन भारतीय षड्दर्शन का खंडन नहीं करता, बल्कि उनके तात्त्विक सार का तारतम्य-केंद्रित समन्वय करता है। यहाँ निर्गुण और सगुण अंतिम सत्य नहीं, बल्कि चेतना की अवस्थाएँ मानी जाती हैं। चेतना-विकास का नियम है, निषेध नहीं, बल्कि पार होना और समाहित करना (Transcend Include) यही तारतम्य का मर्म है- जहाँ हर स्तर को नकारा नहीं जाता, बल्कि उच्चतर चेतना में समाहित किया जाता है।

3. द्विस्तरीय यथार्थ : व्यवहार और चेतना

(क) व्यवहार-तल (कर्म-उपासना) : महामति प्राणनाथ जी जीवन को दो स्तरों पर देखते हैं-व्यवहार और चेतना। व्यवहार-तल पर शरीर, मन, समाज और धर्मशास्त्रीय नियम आवश्यक हैं। ये मर्यादा, संतुलन और व्यवस्था बनाए रखते हैं। परंतु नियम अंतिम सत्य नहीं वे समय, परिस्थिति और चेतना के अनुसार बदलते हैं। जब नियमों में जड़ता या अहंकार जुड़ता है, तब धार्मिक कट्टरता आ जाती है। इसलिए धर्म का सार विधान से अधिक भाव और सदाचार में निहित है।

(ख) चेतना-तल (ज्ञान-विज्ञान) : चेतना-तल पर प्रेम, स्मरण, भक्ति और आत्मानुभूति प्रधान हो जाते हैं। जब व्यवहार में विवेक, लचीलापन और संवाद आता है, तब चेतना स्वतः विकसित होती है। तब जीवन व्यक्तिगत सुख से ऊपर उठकर सुख शीतल करूँ संसार की करुणा में परिवर्तित हो जाता है।

4. स्वलीला-अद्वैत और समन्वित एकेश्वरवाद

निजानन्द दर्शन चेतना-विकास की यात्रा को इस प्रकार प्रस्तुत करता है : देह-बोध, आत्म-बोध, परब्रह्म-बोध-अक्षरातीत प्रेमानन्द। महामति प्राणनाथ जी का अद्वैत स्वलीला अद्वैत है, जहाँ सम्पूर्ण सृष्टि को प्रेममय परब्रह्म की लीला के रूप में अनुभव किया जाता है। उनका एकेश्वरवाद विविध परंपराओं को नकारता नहीं, बल्कि एक साझा सत्य में जोड़ता है।

5. धर्मों का सेतु : अर्थ-स्तर पर एकता

महामति ने वेद-कतेब, पुराण-कुरान, अवतार-नबी जैसे प्रतीकों के माध्यम से विभिन्न धर्मों के बीच अर्थ-स्तर का सेतु स्थापित किया। उनका निष्कर्ष स्पष्ट है : धर्म अनेक हैं, पर सत्य एक है; पथ अनेक हैं, पर लक्ष्य चेतना का उत्कर्ष है।

6. गीता के आलोक में अंतिम सत्य

गीता के क्षर-अक्षर-अक्षरातीत सिद्धांत के अनुसार : क्षर परिवर्तनशील माया क्षेत्र, अक्षर-अविनाशी आधार, और अक्षरातीत इन दोनों से परे, परम प्रेममय सच्चिदानन्द। निजानन्द दर्शन का अंतिम लक्ष्य है- निज स्वरूप की जागृति द्वारा अक्षरातीत प्रेमानन्द का अनुभव।

निजानन्द दर्शन एक ऐसा मार्ग है, जहाँ खोज से आरम्भ होकर चेतना क्रमशः विकसित होती हुई अंततः अक्षरातीत प्रेमानन्द में स्थापित हो जाती है।

श्री निजानन्द सम्प्रदाय पद्धति

सतगुरु ब्रह्मानन्द है, सूत्र है अक्षर रूप ।
सिखा सदा इनसे परे, चेतन चिद जो अनूप ।। 1 ।।

परमब्रह्म की आनंद स्वरूपा (श्री श्यामा जी) परम सतगुरु है। परमब्रह्म का सत् अंग अक्षरब्रह्म आत्माओं को उन से जोड़ने वाला परमसूत्र है। इन दोनों से परे (इन के प्रेरक) नित्य चैतन्य स्वरूप अनुपम शोभा युक्त चिद्धन (श्री राज) सिखा की भाँति शोभायमान है।

सेवन है पुरुषोत्तम, गौत्र चिदानंद जान ।
परमकिशोरी इष्ट है, पतिव्रता साधन माना ।। 2 ।।

वे अक्षरातीत पुरुषोत्तम ब्रह्मात्माओं के एकमात्र सेव्य है। हम ब्रह्मात्माओं का गोत्र (मूल) निश्चित रूप से यह चिदानंद स्वरूप (श्री राज श्यामा जी) है। (उन्हीं के अंगरूपा हम सभी आत्माएं हैं)। परब्रह्म की अर्धांगिनी शक्ति परम किशोरी श्री श्यामाजी हमारी इष्ट हैं। एक पतिव्रता स्त्री के समान अनन्य प्रेमलक्षणा भक्ति से परब्रह्म की उपासना करना ही हमारा साधन है।

श्री जुगल किशोर को जाप है, मंत्र तारतम सोए ।
ब्रह्मविद्या देवी सही, पुरी नौतन मम जोए ।। 3 ।।

युगल किशोर स्वरूप सच्चिदानन्द परब्रह्म के नाम (श्री राजश्यामा जी) का हम जप करते हैं। हमारा मंत्र तारतम है। हम ब्रह्मविद्या (श्री तारतम वाणी) को अपनी देवी मानते हैं। श्री तारतम ज्ञान की उद्गम स्थली नवतनपुरी हमारी पुरी है।

अठोत्तर सौ पख साखा सही, साला है गौलोक ।
सतगुरु चरण को क्षेत्र है, जहां जाए सब सोक ।। 4 ।।

साधना-संयोजन और चेतना के समग्र मानचित्र रूप 108 पक्ष अक्षर-क्षेत्र में शाखाओं के रूप में प्रकाशित हैं और गौलोक वह शाला है, जिस का लीला रसपान इन सबसे परे अक्षरातीत परमधाम के 25 पक्षों के चितवन का द्वार खोल देता है।

सुख विलास माहें नित ब्रन्दावन, रिषी महाविष्णु है जोए ।
वेद हमारो स्वयं है, तीरथ जमुना सोए ।। 5 ।।

जहाँ हमारे (ब्रह्मात्माओं के) द्वारा की गई सुख-विलास की लीला आज

भी अखण्ड है, वह स्थान नित्य वृंदावन है। हमारे ऋषि महाविष्णु जी हैं। हम चार वेदों से परे पाँचवा वेद, स्वसंवेद (तारतमवाणी) को मानते हैं। हमारा तीर्थ दिव्य ब्रह्मपुर धाम में विराजमान परम पावन यमुना जी है।

सास्त्र श्रवण श्री भागवत, बुद्ध जागृत को ज्ञान ।
कुल मूल हमारो आनन्द है, फल नित्य विहार प्रमान ।। 6 ।।

श्रीमद्भागवत में स्थित हमारे प्रमाणों का हम श्रवण करते हैं। जागृत बुद्धि से अवतरित तारतम वाणी ही हमारे ज्ञान का स्रोत है। हमारे कुल (आत्मा) का मूल परब्रह्म की आनन्द स्वरूपा श्री श्यामा जी हैं, हम आत्माएं जिनके अंगरूपा हैं। हमारे पंथ का अनुसरण करने का फल है– दिव्य परमधाम की लीलाओं में प्रियतम के साथ आत्म स्वरूप में लीला विहार करना।

दिव्य ब्रह्मपुर धाम है, घर अक्षरातीत निवास ।
निजानन्द है सम्प्रदा, ए उत्तर प्रस्न प्रकास ।। 7 ।।

ब्रह्मपुर (परमधाम) हमारा धाम है। हमारा (हम आत्माओं का) घर अक्षरातीत परब्रह्म का निवास (दिव्य परमधाम) ही है (क्योंकि हम आत्माएं उन्हीं के अंगरूपा हैं)।

हमारे सम्प्रदाय का नाम निजानन्द है। इस प्रकार प्रश्नों का समाधान है।

धनी श्री देवचंद्र जी निजानन्द, तिन प्रकट करी सम्प्रदा एह ।
तिनथें हम यह लखी हैं, हम द्वार पावें अब तेह ।। 8 ।।

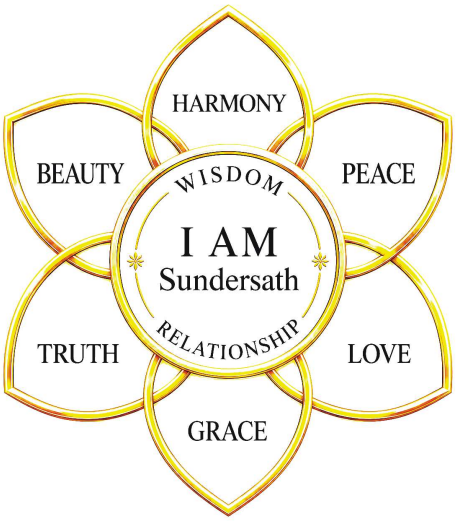
धनी श्री देवचंद्र जी निजानंद स्वामी हैं, जिन्होंने जगत में निजानन्द सम्प्रदाय (यह अलौकिक ज्ञान) प्रकट किया है। उनसे हमने वह ज्ञान प्राप्त किया है। अब सारी दुनिया इस तारतम ब्रह्मज्ञान से सन्मार्ग प्राप्त करेगी। (श्री बीतक से)

श्री कुलजम स्वरूप का संक्षिप्त परिचय

जिसे श्री तारतम वाणी-श्री मुखवाणी भी कहा जाता है

'श्री कुलजम स्वरूप' तारतम वाणी का संग्रहित रूप है। परंपरा के अनुसार इसमें कुल 14 (भाषा-भेद से 17) ग्रंथ, 527 प्रकरण और 18,758 चौपाइयाँ संकलित हैं। इन ग्रंथों का क्रम विषयानुसार नहीं, अवतरण-काल के अनुसार माना जाता है; फिर भी अध्ययन-सुविधा के लिए इन्हें विषयगत रूप से पाँच समूहों में समझा जा सकता है।

1. आत्म-बोधक ज्ञान : रास और प्रकाश-प्रेम-लक्षणा भक्ति, सद्गुरु-धनी निस्बत, स्मरण और रहनी।
2. ब्रह्म-बोधक ज्ञान : षड्ऋतु/खटरूती और कलश- 1 विरह-भाव का विकास, धर्म-समन्वय की भूमि ।
3. शास्त्रीय/समीक्षात्मक ज्ञान : किरन्तन और खुलासा-विविध परंपराओं के संकेतों का तारतम्यपूर्ण स्पष्टीकरण।
4. परमधाम-लीला और स्वरूप-बोध : खिलवत, परिक्रमा, सागर, सिंगार, सिन्धी- प्रेम-रस, चितवनी, अंतर्धारा का अनुभव।



5. विश्वधर्म और अंतिम जागरण-बोध : मारफत सागर और क़यामतनामा (छोटा-बड़ा)- समग्र दृष्टि और आत्म-जागृति का पूर्ण संकेत।

यह वर्गीकरण वाणी का दायरा समझने में सहायता देता है कि यह केवल भक्ति-पाठ नहीं, बल्कि ज्ञान, प्रेम, साधना, समाज और समन्वय का व्यापक मानचित्र है।

तारतम वाणी का भाषिक दर्शन

भाषा विवाद नहीं, संवाद का पुल

तारतम वाणी बहुभाषिक स्वरूप में मिलती है, गुजराती, हिन्दुस्तानी/हिन्दवी, अरबी-फारसी, संस्कृत, और सिंधी का समन्वित प्रयोग। इसका संकेत स्पष्ट है : सत्य को किसी एक भाषा की सीमाओं में बंद नहीं किया जा सकता। भारतीय संस्कृति और शायद विश्व के सभी धर्मग्रंथों में तारतम वाणी ही एक ऐसा ग्रंथ है, जो एक ही व्यक्तित्व के श्रीमुख से अवतरित और बहुभाषिक हो। हिन्दुस्तानी भाषा को लोकसुलभ और सार्वभौमिक संवाद की भाषा जान कर अधिक प्रयोग हुआ है। मूल गुजराती प्रकाश और कलश ग्रंथ बाद में हिन्दी में रूपांतरित हुए हैं।

तारतम वाणी का केंद्रीय भाषा-सिद्धांत स्पष्ट है-भाषा सत्य नहीं, सत्य तक पहुँचने का साधन है। अर्थात भाषा का उद्देश्य विभाजन नहीं, उद्घाटन है। इसके मूल सूत्र हैं-भाषा लोकहित के लिए है, ज्ञान के अहंकार के लिए नहीं। सरल भाषा सत्य को अधिक गहराई से प्रकट करती है। मातृभाषा आत्मीय होती है, पर सार्वभौमिक संवाद के लिए बहुभाषिकता आवश्यक है। भाषा, वेश और जाति ईश्वरीय लीला के अंग हैं-आत्मा एक है। भाषा के मोह से ऊपर उठकर अर्थ और भाव को पकड़ना ही वास्तविक साधना है। वेद, उपनिषद, कतेब और अन्य ग्रंथ भाषा-भेद के बावजूद एक ही सत्य की साक्षी हैं।

महामति प्राणनाथ जी की यात्राएँ भारत से अरब देशों तक फैली थीं, इसलिए उनकी वाणी में वैश्विक और तारतम्य-केंद्रित समन्वय चेतना दिखाई देती है। इसी दृष्टि से महात्मा गांधी का हिन्दुस्तानी का आग्रह, संस्कृत और फारसी

परंपराओं को जोड़ने का प्रयास, तारतम दृष्टि से गहरे रूप में मेल खाता है। तारतम वाणी का भाषिक दर्शन यह सिखाता है कि भाषा न तो संप्रदाय का अस्त्र है, न अहंकार का साधन- वह मानवता को जोड़ने वाला सेतु है। जब भाषा प्रेम, विवेक और सत्य का वाहक बनती है, तब सांस्कृतिक समरसता, आध्यात्मिक एकता और वैश्विक शांति का मार्ग प्रशस्त होता है, यही तारतम वाणी का मूल संदेश है।

श्री कुलजम स्वरूप के चौदह उपग्रंथों का संक्षिप्त विवरण

1. श्री रास ग्रंथ

ज्यारे धणी धणवट करे, त्यारे बल वेरी ना हरे ।
वली गया काम सराडे चढ़े, मन चितव्या कारज सरे ।।
मुखथी सेवा तुंने सी कहुं, जो तुं अंतर आडो टाल ।
अनेक विध सेवा तणी, तुंने उपजसे ततकाल ।।

श्री रास ग्रंथ प्रेम को केवल भावनात्मक आकर्षण नहीं, बल्कि आत्मा और परब्रह्म के शाश्वत संबंध के रूप में स्थापित करता है। **रसानां समूहः रासः** के अनुसार रास रसों का निरंतर बहाव है-यह कोई सांस्कृतिक नृत्य नहीं, बल्कि वह दिव्य चेतन अवस्था है, जहाँ आत्मा शुद्ध, निःस्वार्थ प्रेम का अनुभव करती है। परब्रह्म रस-राज हैं, और रासलीला आत्मा को निजधाम के आनंद की झलक कराती है।

वृन्दावन में श्रीकृष्ण के रूप में प्रकट रासलीला का उद्देश्य यह स्मरण कराना है कि जीवन का मूल सत्य प्रेम है। यहाँ गोपियाँ साधारण पात्र नहीं, बल्कि ब्रह्मात्माओं के प्रतीक हैं। प्रति सखी प्रति श्याम का भाव दर्शाता है कि परब्रह्म प्रत्येक आत्मा के लिए पूर्णतः उपस्थित हैं। इस लीला को सामान्य इतिहास नहीं, बल्कि आध्यात्मिक चेतना के प्रतीक के रूप में समझा जाता है।

रास ग्रंथ ज्ञान-रस और प्रेम-रस का भेद स्पष्ट करता है। ज्ञान मार्ग दिखाता

है, पर परमधाम का सार प्रेम-रस है। विरह प्रेम को क्षीण नहीं करता, बल्कि उसे गहरा और परिपक्व बनाता है। इस प्रकार सेवा, समर्पण और आत्म-जागृति प्रेम के स्वाभाविक फल हैं।

निष्कर्षतः, श्री रास ग्रंथ सिखाता है कि प्रेम ही परम सत्य है, आत्मा-परब्रह्म संबंध जीवंत है, माया अस्थायी है और आत्म-जागरण का वास्तविक मार्ग प्रेम है। यह ग्रंथ पढ़ने मात्र के लिए नहीं, बल्कि प्रेम में जीने की शिक्षा के लिए है।

2. प्रकाश ग्रंथ

जब लग तुम रहो माया में, जिन खिन छोडो रास जी ।
पचीस पख लीजो धाम के, ज्यों होए धनी को प्रकास जी ।।
हद पार बेहद है, बेहद पार अक्षर ।
अक्षर पार वतन है, जागिए इन घर ।।

इस ग्रंथ की वाणी अज्ञान को अंधकार से अधिक आत्म-विस्मृति मानता है। यह ग्रंथ नई जानकारी नहीं देता, बल्कि स्मरण कराता है कि आत्मा देह-मन से परे नूरी, चेतन और आनंदस्वरूप है, जिसका मूल संबंध अक्षरातीत परमधाम से है। यह जागरण मूल भ्रांति का शांत विच्छेदन है, जहाँ पहचान भीतर प्रकट होती है।

इस बोध में स्पष्ट होता है कि शरीर, इंद्रियाँ और अंतःकरण (मन, चित्त, बुद्धि, अहंकार) साधन हैं, स्वामी नहीं। आत्म-प्रकाश के साथ माया का बंधन ढीला पड़ता है और जीवन की दिशा घर की ओर मुड़ती है। यह प्रक्रिया बौद्धिक नहीं, अनुभवगत और जीवनगत है।

प्रकाश ग्रंथ की वाणी से तीन भाव जागते हैं, कृतज्ञता, विरह और प्रेम-सेवा। साधक पहले स्वयं जागता है, फिर दूसरों के लिए दीप बनता है। यह संसार-त्याग नहीं, बल्कि संसार में रहते हुए माया से अछूते रहने की शिक्षा देता है। निष्कर्षतः, प्रकाश ग्रंथ केवल शास्त्र नहीं, आत्म जागृति का दीप है जो अंधकार को नहीं गिनाता, बल्कि प्रकाश की दिशा दिखाता है।

3. खटरुती ग्रन्थ

पोते प्रगट पधार्या छो, आडा देओ छो व्रज ने रास ।
इन्द्रावतीसुं अंतर कां कीधुं, तमे देओ मुने तेनो जवाब ।।
आपोपुं ओलखावी मारा वाला, दरपण दाखो छो प्राणनाथ ।
दरपणनुं सुं काम पडे, ज्यारे पेहेर्युं ते कंकण हाथ ।।

यह ग्रंथ विरह को आत्मा के शोधन और जागरण का माध्यम मानता है। छः ऋतुओं–बसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत और शिशिर के माध्यम से आत्मा अपने भाव व्यक्त करती है, जहाँ ऋतुएँ बाहरी मौसम नहीं, भीतर की चेतना–अवस्थाएँ बन जाती हैं। स्मृति की कोमलता, विरह की तपन, प्रेम की उमंग, शांत प्रतीक्षा, निर्मल आशा और तीव्र तड़प–ये सब आत्मा के प्रियतम–स्मरण को गहराते हैं। इस ग्रंथ में विरह दुःख नहीं, बल्कि आंतरिक परिष्कार है। सद्गुरु–विरह और धनी–विरह के प्रसंग आत्मा की उस प्यास को दर्शाते हैं, जो अंततः उसे निर्मल और समर्पित बनाती है। विरह की अग्नि में अवगुण पिघलते हैं और आत्मा साक्षात् मिलन की आकांक्षा में विनयपूर्वक पुकारती है। अंततः यह विरह प्रेम में रूपांतरित होता है–ऐसा प्रेम जो केवल व्यक्तिगत अनुभव नहीं, बल्कि समग्र जागरण की प्रेरणा बनता है।

सारतः खटरूती ग्रंथ सिखाता है कि सच्चा विरह रोने के लिए नहीं, पहचान और प्रेम–जागृति के लिए होता है।

4. कलश ग्रंथ

तूं कौन आई इत क्योंकर, कहां है तेरा वतन ।
नार तूं कौन खसम की, द्रढ कर कहो वचन ।।
निज बुध आवे अग्याएं, तोलों ना छूटे मोह ।
आतम तो अंधेर में, सो बुध बिना बल ना होए ।।

कलश ग्रंथ की वाणी आत्म–जागृति की पूर्णता का प्रतीक है। जैसे मंदिर शिखर पर कलश स्थापित होने पर पूर्ण माना जाता है, वैसे ही यह ग्रंथ साधना, दर्शन और शास्त्रीय विचार की यात्रा को निर्णायक स्पष्टता तक पहुँचाता है। यह जानकारी नहीं, बल्कि आंतरिक परिवर्तन और पहचान पर बल देता है–जहाँ आत्मा देह,

कर्मकांड और बाह्य आडंबर से ऊपर उठकर अपने निज-स्वरूप को पहचानती है।

यह वाणी सिखाती है कि कर्म अपने आप में मुक्ति नहीं देता; प्रेम, विरह और आत्मीय रहनी ही चेतना को मुक्त करते हैं। विरह को जागरण का प्रारंभ, प्रेम को साधन, और कृपा को पहचान का सेतु बताया गया है। साथ ही, अंधानुकरण और जड़ रूढ़ियों से सावधान करते। हुए सहज, प्रेममय जीवन-पद्धति को श्रेष्ठ ठहराया गया है।

कलश ग्रंथ सर्वधर्म समन्वय का सशक्त आधार भी प्रस्तुत करता है। यह वेद, तौरेत, कुरान और अन्य कतेबों के सत्यांशों को एक व्यापक दृष्टि में देखता है, जहाँ धर्म का उद्देश्य विभाजन नहीं, बल्कि चेतना जागरण और सत्य की पहचान है।

सारतः, कलश ग्रंथ का संदेश है: विरह प्रेम, कृपा, पहचान, आत्मा, जीवन और सामूहिक चेतना को पूर्णता की ओर ले जाने वाला मार्ग।

5. सनंध ग्रंथ

करना सारा एक रस, हिन्दू मुसलमान ।
धोखा सबका भान के, सब का कहूंगी ग्यान ।।
छोड़ गुमान सब मिलसी, ए जो देखत हो जहान ।
जात पांत न भांत कोई एक खान पान एक गान ।।

सनंध ग्रंथ सत्य को अंधविश्वास नहीं, बल्कि प्रमाण और जागृत विवेक के आधार पर प्रस्तुत करता है। यह मानने का आग्रह नहीं करता, बल्कि जाँचने और समझने का साहस देता है। लगभग बयालीस प्रकरणों और सत्रह सौ चौपाइयों में यह ग्रंथ तारतम ज्ञान का प्रामाणिक स्तंभ बनकर खड़ा होता है, जहाँ धर्म का सार भय नहीं, बल्कि विवेक, करुणा और प्रेम बताया गया है।

ग्रंथ स्पष्ट करता है कि समस्या धर्म में नहीं, संकीर्ण और एकांगी दृष्टि में है। जब शास्त्रों को केवल बाह्य अर्थों में पकड़ा जाता है, तो धर्म करुणा खो देता है और कठोरता का रूप ले लेता है। सनंध का संदेश है- अहं का शमन, विवेक का जागरण और प्रेममय जीवन ही सच्ची धार्मिकता है।

यह ग्रंथ विभिन्न परंपराओं- वेद की ज्योति, कुरान के नूर और बाइबिल की लाइट को एक ही चेतन प्रकाश का भिन्न-भिन्न नाम बताकर

सर्वधर्म एकता की अनुभूति कराता है। साथ ही चेतावनी देता है कि किसी एक दृष्टिकोण को पूर्ण सत्य मान लेना असंतुलन और संघर्ष को जन्म देता है; समाधान समन्वित दृष्टि में है।

सारत : सबंध ग्रंथ सत्य का प्रमाण-दीप है, जो साधक को अंधानुकरण से मुक्त कर आत्मिक जागरण और परम लक्ष्य की ओर अग्रसर करता है।

6. किरन्तन ग्रंथ

पेहेले आप पेहेचानो रे साधो, पेहेले आप पेहेचानो ।
बिना आप चीन्हें पार ब्रह्म को, कौन कहे मैं जानो ।।
राजा ने मलो रे राणे राए तणो, धर्म जाता रे कोई दौड़ो ।
जागो ने जोधा रे उठ खड़े रहो, नींद निगोड़ी रे छोड़ो ।।

किरंतन ग्रंथ की वाणी जागरण की वह वाणी है जो मनुष्य को केवल भक्ति-संगीत नहीं, बल्कि आत्म-पहचान की ओर उन्मुख करती है। यह प्रश्न उठाता है-मैं कौन हूँ? और बताता है कि जब तक आत्मा अपने स्वरूप और मूल लोक को नहीं पहचानती, तब तक धर्म बाहरी आचरण तक सीमित रह जाता है। यहाँ निर्मलता वेश या कर्मकांड से नहीं, बल्कि परब्रह्म की पहचान से जन्म लेती है।

यह ग्रंथ सुख और दुःख दोनों को चेतना जागरण के साधन के रूप में देखता है। सुख में आसक्ति से सावधान करता है, और दुःख को परिष्कार का अवसर बताता है। किरंतन संसार से पलायन नहीं, बल्कि संसार में रहते हुए जाग्रत रहने की कला सिखाता है, जहां ज्ञान जीवन-निर्माण का पुल बनता है।

किरन्तन की शैली रूपकों और जीवन-दृष्टांतों के माध्यम से आत्मा-परमात्मा के संबंध को सरल और अनुभवमय बनाती है। यह आध्यात्मिकता, नैतिकता और सामाजिक चेतना का समन्वय प्रस्तुत करता है, साथ ही पाखंड, जाति-भेद और जड़ कर्मकांड का निषेध करता है।

सारत : किरन्तन ग्रंथ का संदेश है भीतर जागो, सत्य को पहचानो, प्रेम में स्थिर रहो और जीवन को साधना बनाओ।

7. खुलासा ग्रंथ

यों लड़ के सब जुदा हुये, पर खसम न होवे दोय ।
रब आलम का ना टरे, जो सिर पटके कोए ।।
महामत कहे ऐ मोमिनो, देखो खसम प्यार ।
ईसा महंमद अंदर आए के, खोल दिए सब द्वार ।।

खुलासा ग्रंथ तारतम ज्ञान के आलोक में वेद-कतेब के गूढ़ अर्थों का समन्वित स्पष्टीकरण प्रस्तुत करता है। यह धर्मों के बाह्य भेदों में उलझने के बजाय उनकी भीतरी एकता को उद्घाटित करता है। इसका उद्देश्य मतभेद मिटाना नहीं, बल्कि सही कुंजी देकर सत्य के अंतरार्थ को समझाना है, जिससे मैं सही-तुम गलत का अहं शिथिल हो और विवेक जागे।

ग्रंथ स्पष्ट करता है कि धर्मों के बीच संघर्ष सत्य की विविधता नहीं, बल्कि मानव-बुद्धि की सीमाओं और अज्ञान का परिणाम है। पहचान केवल शास्त्र-पठन से नहीं, बल्कि भीतरी अर्थ-बोध से संभव होती है। इसी दृष्टि से संसार को परिवर्तनशील दृश्य-लीला मानते हुए हुकम परमात्मा की इच्छा एवं संचालक विवेक को वह तत्त्व बताया गया है जो दृश्य और सत्य के बीच सेतु बनता है।

खुलासा धर्मों के बीच संवाद की राह खोलता है। यह विभिन्न परंपराओं के शब्द- ज्योति, नूर, वर्ड, बोधि को एक ही चेतन प्रकाश के भाषाई संकेत मानकर समन्वय स्थापित करता है। हुकम के बशरी, मलकी और हकी के स्तरों के माध्यम से धर्म, साधना और परम-सत्य का क्रमबद्ध विवेक समझाया गया है।

खुलासा ग्रंथ तारतम ज्ञान के आलोक में वेद-कतेब के गूढ़ अर्थों का समन्वित एवं तात्त्विक स्पष्टीकरण प्रस्तुत करता है। इसका उद्देश्य विभिन्न धार्मिक प्रकाशनाओं में निहित सत्य को उसके मूल आध्यात्मिक संदर्भ में समझते हुए, उनके भीतर विद्यमान एकता, क्रमबद्धता तथा परम तात्पर्य को उद्घाटित करना है। यह धर्मों के बाह्य रूपों, भाषागत भिन्नताओं और परंपरागत सीमाओं से परे जाकर उनके अंतरस्थ सत्य और आध्यात्मिक सामंजस्य को प्रकाश में लाता है।

ग्रंथ यह स्पष्ट करता है कि धर्मों के बीच दिखाई देने वाले अधिकांश संघर्ष सत्य की विविधता के कारण नहीं, बल्कि मानव-बुद्धि की सीमाओं,

आंशिक समझ और अज्ञान के कारण उत्पन्न होते हैं। इसलिए वास्तविक पहचान केवल शास्त्रों के शब्दार्थ या बाह्य अध्ययन से नहीं, बल्कि उनके भीतरी अर्थ-बोध और चेतन अनुभूति से संभव होती है। इसी दृष्टि से संसार को परिवर्तनशील दृश्य-लीला माना गया है, जबकि हुकम को परमात्मा की इच्छा और संचालक विवेक के रूप में समझाया गया है, जो दृश्य जगत और शाश्वत सत्य के बीच सेतु का कार्य करता है।

खुलासा विभिन्न धार्मिक परंपराओं के बीच सार्थक संवाद की राह भी प्रशस्त करता है। यह दर्शाता है कि ज्योति, नूर, वर्ड (Word) और बोधि जैसे भिन्न-भिन्न धार्मिक शब्द वस्तुतः एक ही चेतन प्रकाश की विविध भाषायी अभिव्यक्तियाँ हैं। इसी प्रकार हुकम के बशरी, मलकी और हकी स्तरों के माध्यम से धर्म, साधना और परम-सत्य के क्रमिक विकास तथा उनके पारस्परिक संबंध का विवेकपूर्ण निरूपण किया गया है।

इस प्रकार खुलासा न तो किसी मत का खंडन करता है और न ही कृत्रिम समानता स्थापित करने का प्रयास। वह ऐसी यथार्थ कुंजी प्रदान करता है जिसके द्वारा साधक विविध धर्मग्रंथों के अंतरार्थ, संकेत और मूल अभिप्राय को समझ सके। फलतः मैं ही सही हूँ, तुम गलत हो जैसी संकीर्ण अहं-ग्रस्त दृष्टि शिथिल होती है और उसके स्थान पर विवेक, संवाद, परस्पर सम्मान तथा सत्य की व्यापक पहचान का विकास होता है।

सारतः, खुलासा ग्रंथ का मूल संदेश है-विवाद नहीं, विवेक; विभाजन नहीं, समन्वय; और केवल आस्था नहीं, बल्कि जाग्रत पहचान।

8. खिलवत ग्रंथ

ऐसा खेल देखाइया, मांग लिया है हम ।
अब कैसे अरज करूं, कहोगे मांग्या तुम ।।
एही मैं है हुकम, एही मैं नूर जोस ।
एही मैं इलम हक का, एही मैं हक करे बेहोस ।।

खिलवत ग्रंथ में आत्मा और अक्षरातीत परब्रह्म के बीच उस अंतरंग मिलन का रहस्य उद्घाटित करता है, जहाँ बाहरी परिस्थितियाँ भीतर के प्रेम-प्रकाश को डगमगा नहीं पातीं। यहाँ खिलवत बाहरी एकांत नहीं, बल्कि चेतना की वह अवस्था है जिसमें मैं-तू का भेद गलकर केवल

प्रेम-रस शेष रहता है।

यह ग्रंथ प्रेम, भुलवनी और जागृति के संबंध को स्पष्ट करता है। विरह को दंड नहीं, बल्कि प्रेम की परिपक्वता और आत्मा के शोधन का साधन बताया गया है। संसार को स्वप्न-सदृश दृश्य मानते हुए यह समझ दी गई है कि अस्थायी अनुभवों के माध्यम से ही आत्मा शाश्वत प्रेम-सत्य का मूल्य पहचानती है।

खिलवत ग्रंथ अक्षर और अक्षरातीत को स्वरूप से एक, पर लीला में भिन्न बताती है-जहाँ अक्षर सृष्टि-व्यवस्था का आधार है और अक्षरातीत प्रेम-माधुर्य की पराकाष्ठा। भुलवनी-विरह-मिलन का क्रम आत्मा को जागरण और प्रेम-बोध की ओर ले जाता है।

सारत : खिलवत ग्रंथ सिखाता है कि आत्मा का अंतिम लक्ष्य अहं-विलय के साथ प्रेम, बुद्धि और आचरण की एकरसता है, जहाँ जीवन स्वयं प्रेम-सेवा बन जाता है।

9. परिक्रमा ग्रंथ

अब आओ रे इसक भानूं हाम, देखूं वतन अपना निज धाम ।
करूं चरन तले विश्राम, विलसों पियाजी सो प्रेम काम ।।
एही अपनी जागनी, जो याद आवे निज सुख ।
इसक याही सों आवहीं, याही सों होइए सनमुख ।।

परिक्रमा ग्रंथ आत्मा को परमधाम के 25 प्रेम-आयामों की आंतरिक यात्रा कराता है। यह जानकारी देने वाला शास्त्र नहीं, बल्कि चेतना को प्रेमपूर्वक धाम के अनुरूप ढालने वाला मार्गदर्शक है। इसकी परिक्रमा पैरों से नहीं, चित्त और चेतना से होती है-जहाँ साधक परमधाम को केवल जानता नहीं, उसे जीना सीखता है।

ग्रंथ परमधाम को किसी जड़ भूगोल के रूप में नहीं, बल्कि प्रेम की अवस्थाओं और चेतना के अनुभव-क्षेत्रों के रूप में प्रस्तुत करता है। यहाँ वर्णित रंगमहल, कुंज, यमुना या सागर प्रतीक हैं- प्रेम, सेवा, एकदिली और आनंद-विहार के। इस दृष्टि में परमधाम नित्य, कालातीत और प्रेम-रस से परिपूर्ण चेतन भूमि है।

परिक्रमा ग्रंथ का केंद्रीय साधन चितवनी है-प्रेमपूर्वक देखना और

स्मरण करना। इसी के माध्यम से आत्मा में धाम-स्मृति जागती है, मोह ढीला पड़ता है और प्रेम गहराता है। यह यात्रा देखने की नहीं, हो जाने की यात्रा है।

सारत : परिक्रमा ग्रंथ आत्मा को लक्ष्य, आधार और रस प्रदान करता है ताकि साधक परमधाम को केवल माने नहीं, बल्कि अनुभव करे और उसी प्रेम में लौटने को आतुर हो।

10. सागर ग्रंथ

ये खेल हुआ मेहेर वास्ते, माहें खेलावे सब मेहेर ।
जाथे मेहेर जुदी हुई, तब होत सब जेहेर ।।
इन दुख की जिमी में बैठ के, मेहेर देखे दुख दूर ।
कायम सुख जो हक के, सो मेहेर करत हजूर ।।

सागर ग्रंथ में परम चेतन की अनन्तता और दिव्य गुण-लीलाओं का बोध कराता है। यह सागर के रूपक के माध्यम से समझाता है कि परमात्मा को जानना-मापना नहीं, बल्कि उसकी गहराई, स्वभाव और असीमता में चेतना से उतरना है। संसार के सागर जड़ हैं शक्ति रखते हुए भी चाह और कृपा से रहित; जबकि परमधाम का आनंद-सागर चेतन है- प्रेम, सौंदर्य और प्रज्ञान से संचालित ।

परिक्रमा ग्रंथ और सागर ग्रंथ का संबंध यहाँ स्पष्ट होता है : परिक्रमा ग्रंथ सागरों की जाहिरी (दृश्य) शोभा दिखाता है, जबकि सागर ग्रंथ उनका बातिनी (आंतरिक) गुण-स्वरूप खोलता है। यहाँ सागर जल नहीं, बल्कि परब्रह्म के दिव्य गुणों के महासागर हैं, जो धनी के हृदय-कमल से प्रकट माने गए हैं।

इस ग्रंथ का केंद्रीय तत्त्व प्रज्ञान है। ज्ञान सीमाओं में समझता है; प्रज्ञान सीमाओं के पार एकत्व में टिकता है। परमधाम में चिद-प्रज्ञान एकरस है, इसलिए वहाँ नित्य स्थिरता है; सृष्टि में वही चिद-रस ज्ञान-रूप होकर विविधता बनता है। साधक के लिए यह संकेत है कि झलक को मूल से जोड़ा जाए।

सागर ग्रंथ आठ सागरों को गुण-प्रवाह के रूप में देखता है-प्रत्येक में सभी विद्यमान, पर एक प्रधान गुण प्रकाशित। नूर (तेज), नीर (शोभा), क्षीर (इकदिली), दधि (श्रृंगार), घृत (अंतरंग इश्क), मधु (प्रज्ञान), रस (निसबत) और सर्वरस (मेहेर/कृपा) अलग वस्तुएँ नहीं, बल्कि परमधाम-सत्य के आठ अनुभव-द्वार हैं।

सारतः, सागर ग्रंथ साधक को बाह्य वैभव से भीतर की गहराई की ओर ले जाता है-जहाँ चितवनी द्वारा गुणों का अध्ययन नहीं, गुणों में स्नान होता है, और अनन्तता चेतना के स्वभाव के रूप में जागती है।.

11. सिनगार ग्रंथ

ज्यों ज्यों अरस होवे नजीक, त्यों त्यों खेल होवे दूर ।
यों केहेते खेल छूटया नजरों, तो रूहें कदम तले हजूर ।।
दुनी में बैठाए न्यारे दुनी से, किए ऐसी जुगत बनाए ।
सुख दिए दोऊ ठौर के, अरस दुनी बीच बैठाए ।।

सिनगार ग्रंथ का केंद्रीय संदेश यह है कि जीवन का सर्वोच्च श्रृंगार बाहरी सजावट नहीं, बल्कि परमात्मा का भीतरी प्रकाश है। मनुष्य सुख, सौंदर्य और प्रेम की ओर इसलिए आकृष्ट होता है क्योंकि आत्मा रस की प्यासी है; पर संसार के रस क्षणिक हैं, आत्मा को पूर्ण तृप्ति नहीं दे पाते।

यह ग्रन्थ बताता है कि सच्चा, स्थायी और पूर्ण सौंदर्य परमात्मा में ही है। ग्रन्थ संसार का निषेध नहीं करता, बल्कि दिशा-संशोधन करता है-रस को गलत जगह खोजने के स्थान पर उसे ऊर्ध्व करने की प्रेरणा देता है। यहाँ दमन नहीं, रूपांतरण का मार्ग है। मन उपदेश से नहीं, अनुभव से बदलता है; इसलिए रास-लीला और परमधाम-चितवनी साधक को देह-आसक्ति से प्रेम-रस की चेतना की ओर ले जाती हैं।

सिनगार ग्रन्थ यह भी स्पष्ट करता है कि दिव्य सौंदर्य विभिन्न लोकों में न्यूनाधिक रूप से प्रकट होता है- परमधाम में पूर्ण, अक्षर में कम, और क्षर जगत में सीमित झलक के रूप में। फिर भी जगत की हर सुंदरता उसी परम शोभा की आभा है। परब्रह्म को रसराज कहकर ग्रन्थ संकेत देता है कि सभी रसों की पराकाष्ठा एक ही स्रोत में निहित है।

मानव-देह के रूपक यहाँ समझ की सुविधा हेतु सेतु हैं, न कि स्थूल कल्पना। साधन की यात्रा भाव से महाभाव और महारास तक पहुँचती है, जहाँ प्रेम और ज्ञान का भेद मिटने लगता है-जानना ही हो जाना बन जाता है।

सारतः, परमात्मा को हृदय में प्रतिष्ठित कर लेने पर संसार त्याज्य नहीं, बल्कि स्वयमेव छोटा प्रतीत होता है; और जीवन सजावट से दिव्य शोभा में रूपांतरित हो जाता है।

12. सिन्धी ग्रंथ

हुकमें देखाया हुकम को, तिन हुकमे देख्या हुकम ।
भिस्त दोजख उन हुकमें, आखर सुख सब दम ।।
हम उठ बैठे अरस में, हमको हुकमे दिया सब याद ।

हुकमें हुकम खेल देखाया, सो हुकमे हुकम आया स्वाद ।।
हुकम इलम खेल एकै, और कोई न कहूं दम ।
इत रूह न कोई रूहन की, जो कछू होय सो हुकम ।।

सिन्धी ग्रंथ विरह से जागरण तक की भीतरी यात्रा का काव्यात्मक दस्तावेज़ है। यह आत्मा की उस पुकार को स्वर देता है, जहाँ साधक संसार की अस्थिरता पहचान चुका होता है, पर परमधाम का अनुभव अभी स्थिर नहीं हुआ होता। कुलजम स्वरूप की अंतिम अंतर्धारा के रूप में प्रकट यह वाणी विरह को दुःख नहीं, शोधन-अग्नि मानती है-ऐसी अग्नि जो अहं, आसक्ति और भ्रम को गलाकर प्रेम को निर्मल बनाती है।

ग्रंथ साधक की दो सूक्ष्म अवस्थाओं को उजागर करता है: पहली, जब संसार का मोह ढीला पड़ जाता है पर धाम की स्थायी अनुभूति नहीं मिलती-भीतर रिक्तता की अनुभूति; दूसरी, जब आनंद की झलक मिलती है पर टिकती नहीं-जिससे विरह और तीव्र होता है। इन अनुभवों को वाणी भाव-ऋतुओं की तरह चित्रित करती है, जहाँ टूटन तड़प में और तड़प प्रेम-गहराई में रूपांतरित होती है।

सिन्धी वाणी एक गहरा विवेक सिखाती है विचार और अनुभूति अलग हैं। परमात्मा शब्दातीत हैं, फिर भी प्रेम में स्मरण आवश्यक है। यही वाणी का सेतु-स्वरूप है : 'वह परे है' और 'फिर भी प्रेम से पुकारो।' स्मरण से चित्त टिकता है, टिकाव से सीमाएँ ढीली पड़ती हैं। धीरे-धीरे साधक दृश्य से हटकर दर्शक को पहचानने लगता है-जीवन को लीला और स्वयं को साक्षी के रूप में देखता है।

यह ग्रंथ भाव-दीक्षा का मार्ग भी खोलता है। ब्रज-रास के रूपक यहाँ मनोरंजन नहीं, बल्कि प्रेम-संस्कार हैं। प्रेम के लक्षण-अश्रु, पुलक,

विनय-आत्मा की परिपक्वता के संकेत बनते हैं। साथ ही, वाणी प्रेम की गोपनीयता और विनम्रता पर बल देती है-जो पाया, उसे भीतर सँभालो।

सारतः, सिन्धी ग्रंथ विरह को प्रेम की पराकाष्ठा की तैयारी के रूप में प्रतिष्ठित करता है। यह साधक को अधूरेपन की पीड़ा से उठाकर पहचान, साक्षीभाव और अनन्य प्रेम की दिशा देता है-जहाँ जागरण विचार से नहीं, हृदय-परिवर्तन से घटित होता है।

13. मारफत सागर ग्रंथ

तिन दिलों पर सूरज, ऊग्या मारफत ।
जिनों पाई अरस इलमें, हक की हिदायत ।।
महामत कहे ऐ मोमिनो, हादिएं खोल दिए दिन बातन ।
क्यामत दिन जाहेर कर, देखाया अरस बका वतन ।।

मारफत सागर समग्र दृष्टि और एकत्व-बोध का ग्रंथ है। यह साधक को आंशिक अनुभवों की सीमाओं से उठाकर उस चेतना-बिंदु तक ले जाता है, जहाँ विविध धर्म, परंपराएँ और साधना-पथ एक ही सत्य के भिन्न आयाम रूप में समझ में आते हैं। जैसे अलग-अलग खिड़कियों से दिखता आकाश अंततः एक ही होता है, वैसे ही यह ग्रंथ सिखाता है कि प्रत्येक धर्म सत्य की एक झलक है, पूर्णता नहीं।

यह वाणी खंड-दृष्टि के भ्रम को तोड़ती है। अंधे और हाथी के दृष्टांत की तरह, केवल एक मत या अनुभव को अंतिम मान लेना सत्य को सीमित कर देता है। मारफत सागर बताता है कि सच्चा ज्ञान समन्वय में है- जहाँ विरोध नहीं, परस्पर पूरकता दिखाई देती है।

ग्रंथ यह भी स्पष्ट करता है कि मारफत केवल अध्ययन से नहीं,

चेतना-परिपक्वता से खुलती है। जब चित्त निर्मल और पारदर्शी होता है, तब धर्म और आध्यात्मिक प्रतीक बाहरी कथाएँ नहीं रहते, बल्कि जीवंत अनुभव बनते हैं। सूफ़ी परंपरा के शरीया-तरीका-हकीका-मारिफ़ा तथा भारतीय कर्म-उपासना-ज्ञान-विज्ञान के क्रम को जोड़ते हुए यह ग्रंथ स्थायी बोध की ओर संकेत करता है।

महामति की दृष्टि में यह समग्रता प्रेम में पूर्ण होती है। साधना का लक्ष्य केवल जानना नहीं, बल्कि प्रेम-सत्य में स्थिर होना है। इसलिए संदेश स्पष्ट है- किसी भी पड़ाव को अंतिम मत मानो; चेतना को निरंतर व्यापक करो। सारतः, मारफत सागर धर्मों के बीच सेतु बनाकर यह बोध कराता है कि सत्य एक है, मार्ग अनेक। ज्ञान का उद्देश्य विवाद नहीं, विवेक और एकता है।

14. क़यामतनामा ग्रंथ (छोटा और बड़ा)

कदी केहेनी कहे मुख से, बिन रेहेनी न होवे काम ।
रेहेनी रूह पोहोंचावहीं, केहेनी लग रहे चाम ।।
एक ईमान दूजा इसक, ए पर मोमिन बाजू दोए ।
पट खोल पोहोंचावे लुदंनी, इन तीनों में दुनी पें न कोए ।।

क्यामतनामा जागरण और आत्म-बोध का ग्रंथ है। यह स्पष्ट करता है कि क़यामत कोई बाहरी विनाश घटना नहीं, बल्कि चेतना के जागने की वह घड़ी है, जहाँ माया का स्वप्न स्वतः ढहने लगता है। जैसे नींद खुलते ही सपना बिना संघर्ष के समाप्त हो जाता है, वैसे ही आत्म-जागृति से भ्रम शिथिल हो जाता है।

इसमें क़यामत के दो स्तर बताए गए हैं। छोटी क़यामत (सुगरा)

व्यक्ति के भीतर घटती है- जब आत्मज्ञान उदित होता है, अहं की पकड़ ढीली पड़ती है, और जीवन की दिशा मूल पहचान की ओर मुड़ती है। इसे जीते-जी मरना कहा गया है-अर्थात अहं का लय और चेतना का उदय। बड़ी क़यामत (कुबरा) सामूहिक स्तर पर प्रकट होती है-मानवता की चेतना अज्ञान से धर्म-ज्ञान और आगे समन्वित विवेक की ओर बढ़ती है। विभाजन से समन्वय की यह यात्रा भी परम लीला का अंग समझी जाती है।

ग्रंथ का निष्कर्ष सरल है : दोनों क़यामतों का लक्ष्य एक ही है-मूल स्वरूप में जागरण। छोटी क़यामत आत्मा को भीतर से मुक्त करती है, बड़ी क़यामत बुद्धि को व्यापक बनाती है।

सारतः, क़यामतनामा सिखाता है कि सच्चा परिवर्तन बाहर नहीं, भीतर होता है- जहाँ अहं का अंत, चेतना का प्रकाश और आत्मा की घर वापसी एक साथ घटित होते हैं।

श्री बीतक साहेब : जागरण की जीवंत कथा

अब कहों फेर के, मूल मिलावे की बीतक ।
जैसी आज्ञा धनी की, सो बातें बुजरक ।।
विरोध सारा विश्व का, भागत इन बीतक ।
सबको पहिचान होवहीं, पहुँचे कदमों हक ।।
महामत कहें सैयन को, ए सेवा के कहे साथ ।
इहां तेही खड़े रहे, जाके धनीएं पकड़े हाथ ।।

बीतक साहेब (1695 ई.) श्री निजानन्द (प्रणामी) सम्प्रदाय का अत्यंत महत्त्वपूर्ण और पूज्य ग्रंथ है। इसे केवल संतों के जीवन की घटनाओं का क्रमबद्ध विवरण समझना पर्याप्त नहीं, बल्कि यह एक ऐसी जीवंत आध्यात्मिक यात्रा है, जो मनुष्य को उसके वास्तविक स्वरूप और परमधाम की ओर जागृत करती है। इसमें श्री निजानन्द स्वामी (देवचन्द्रजी), महामति प्राणनाथ जी (श्री मिहिरराज), महाराजा छत्रसाल, ब्रह्ममुनि लालदासजी, नवरंग स्वामी, फूलबाई, तेजकुँवर, लालबाई सहित अनेक सुन्दरसाथ के जीवन और उनके जागनी (आध्यात्मिक जागरण) कार्यों का सजीव चित्रण मिलता है, जिन्होंने समाज और चेतना के रूपांतरण हेतु अपना जीवन समर्पित किया।

आध्यात्मिक दृष्टि से बीतक की संरचना साधारण इतिहास नहीं, बल्कि चेतना की एक पूर्ण यात्रा का मानचित्र है। यह परमधाम की दिव्य लीला से प्रारम्भ होकर ब्रज-लीला, रास-रसानंद और जागनी-लीला के अनुभवों से गुजरते हुए आत्मा की स्मृति, विस्मृति और पुनः जागरण की प्रक्रिया को प्रकट करती है, और अंततः साधक को उसके मूल स्वरूप परमधाम में प्रतिष्ठित होने का बोध कराती है। इस प्रकार यह ग्रंथ साधक के लिए एक सेतु है, जिसके माध्यम से वह वैचारिक समझ से आगे बढ़कर अनुभूत सत्य तक पहुँचता है।

यह ग्रंथ यह भी स्पष्ट करता है कि सच्चा ज्ञान केवल आंतरिक अनुभूति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि जीवन, व्यवहार, सेवा और समाज में उतरकर परिवर्तन का कारण बनता है। बीतक में दर्शाया गया है कि जाग्रत चेतना व्यक्ति से आगे बढ़कर समाज को दिशा देती है- अंधविश्वास, अस्पृश्यता, जाति-भेद, धार्मिक कट्टरता, हिंसा, स्त्री-अन्याय

और व्यसनों के विरुद्ध खड़ी होकर प्रेम, समता और सत्य का मार्ग प्रशस्त करती है। महामति प्राणनाथ द्वारा ब्रह्म और अल्लाह की एकता का संदेश इसी समन्वयात्मक दृष्टि का प्रतीक है।

बीतक का एक महत्त्वपूर्ण आयाम यह भी है कि यह उस समय की सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक परिस्थितियों का सजीव और विश्वसनीय चित्रण प्रस्तुत करती है। इसमें संतों और राजाओं के संबंध, समाज की जटिलताएँ और समन्वय के प्रयास स्वाभाविक रूप से उभरते हैं, जिससे यह ग्रंथ आध्यात्मिक होने के साथ-साथ एक प्रामाणिक ऐतिहासिक साक्ष्य भी बन जाता है।

प्रथम बीतक की रचना ब्रह्ममुनि लालदासजी ने संवत 1751 (1695 ई.) में अपने प्रत्यक्ष अनुभव, श्रवण और जागनी लीला की अनुभूति के आधार पर की। यह संकलन केवल व्यक्तिगत लेखन नहीं, बल्कि सुन्दरसाथ समाज की सामूहिक चेतना का संहिताबद्ध स्वरूप है, जिसे एक प्रकार का आध्यात्मिक-ऐतिहासिक दस्तावेज (सनद) माना जाता है, जो परब्रह्म की लीला को विभिन्न आयामों में दर्पण की भाँति प्रस्तुत करता है। सम्प्रदाय में लगभग सत्रह बीतक ग्रंथों की परंपरा मिलती है, जिनमें से आठ प्रमुख रूप से प्रसिद्ध हैं, जैसे लालदासजी की बीतक, वृतांत मुक्तावली, नवरंग बीतक और मेहराज चरित्र आदि।

आज भी भारत और विश्वभर में बीतक साहेब का अत्यंत श्रद्धा के साथ पाठ और चिंतन किया जाता है। इसकी भाषा सरल है, पर इसके गूढ़ अर्थों को समझाने हेतु विभिन्न भाषाओं में अनुवाद उपलब्ध हैं। यह ग्रंथ हमें यह समझने में सहायता करता है कि जागरण केवल अतीत की घटना नहीं, बल्कि हर युग में घटित होने वाली एक सतत प्रक्रिया है, जो मनुष्य

को भीतर से बदलते हुए उसे उसके वास्तविक स्वरूप की पहचान तक ले जाती है।

अंततः, बीतक साहेब एक ऐसा जीवंत आध्यात्मिक मानचित्र है, जो इतिहास, दर्शन और जीवन को एकीकृत करते हुए साधक को यह बोध कराता है कि मानव जीवन का उद्देश्य केवल जीना नहीं, बल्कि जागना, पहचानना और प्रेममय सत्य निजानन्द में प्रतिष्ठित होना है।

श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम, पन्ना की महिमा

पन्ना केवल भौगोलिक नगरी नहीं, बल्कि चेतना, श्रद्धा और समन्वित अध्यात्म की जीवंत भूमि के रूप में प्रतिष्ठित है। इसे पद्मावतीपुरी धाम कहा जाता है–जहाँ दिव्य स्मृतियाँ, गुरु–परंपरा और प्रेम–भक्ति का प्रवाह एक साथ अनुभव होता है।

पौराणिक मान्यता के अनुसार यह स्थल विन्ध्याचल क्षेत्र में वह पावन धरातल है, जिसे शिव–पार्वती ने भविष्य के दिव्य अवतरण हेतु प्रणाम किया। इसी भावभूमि पर श्री गुम्मट जी मंदिर जैसे अद्वितीय स्थापत्य का निर्माण महाराजा छत्रसाल ने महामति प्राणनाथ जी के निर्देशानुसार कराया, जो आज अखण्ड मुक्तिपीठ का प्रतीक है।

श्री पंजा साहब परब्रह्म की ज्ञान, आवेश, आनंद, आज्ञा और तारतम शक्तियों के समन्वित आशीर्वाद का चिन्ह माना जाता है। श्री लच्छीदास जी का कड़ा सेवा–भाव और आशीर्वाद की निरंतर स्मृति का प्रतीक है, जिसे श्रद्धालु स्वास्थ्य–कल्याण से जोड़ते हैं।

श्री बंगला जी मंदिर आध्यात्मिक, सामाजिक और राजधर्मीय मार्गदर्शन का केंद्र रहा, जहाँ छत्रसाल का राज्याभिषेक हुआ और हीरा–

वरदान की परंपरा जुड़ी। रासमण्डल प्रेम-रस की वार्षिक अनुभूति का अद्वितीय स्थल है।

श्री देवचन्द्र जी मंदिर गुरु-कृतज्ञता का प्रतीक है, जबकि श्री बाईजू राज मंदिर आनंद, विरह और आश्वासन की दिव्य स्मृति को जीवित रखता है। श्री चौपड़ा मंदिर समर्पण, तप और औषधीय पावन जल की महिमा से जुड़ा है।

केशव कुंज तारतम वाणी के संकलन-सेवा की ऐतिहासिक चेतना का केंद्र है। खेजड़ा मंदिर शक्ति, विजय और धर्मरक्षा के आशीर्वाद का प्रतीक है। किलकिला नदी शुद्धि, नवजीवन और कृपा-स्पर्श की स्मृति को धारण करती है।

सारतः, पन्ना महिमा श्रद्धा, सेवा, समर्पण, प्रेम-रस और समन्वित चेतना का संगम है, जहाँ दर्शन बाहरी यात्रा नहीं, बल्कि भीतर के जागरण का आमंत्रण बन जाता है।

दर्शनीय अध्यात्म नगरी-पन्ना

पन्ना झीलों, हीरों और मंदिरों की नगरी कहलाती है। पन्ना जिला ऐतिहासिक, पौराणिक और वैदिक काल की महत्वपूर्ण घटनाओं का भी साक्षी रहा है। प्राचीन काल के ऋषियों की यह तपःस्थली, भगवान राम के वनवास की निवास-स्थली, पाण्डवों की आश्रय-स्थली और अनेक धार्मिक मान्यताओं की आस्था-स्थली रही है।

पन्ना में राष्ट्रीय उद्यान, टाइगर रिजर्व, डायमण्ड माइन्स, पाण्डव गुफाएँ, किमासन जल प्रपात, किलकिला झरना, बड़ी देवी मंदिर, जुगल किशोर मंदिर, बल्देव मंदिर, राम जानकी मंदिर, बड़ा जैन मंदिर, गोविन्द

जी मंदिर, कौआ सेहा, बृहस्पति कुंड, झोर का चौपड़ा आदि अनेक ऐसे पर्यटन स्थल हैं जिनके दर्शन कर पर्यटक कृतकृत्य हो जाते हैं। महामति प्राणनाथ जी के चरण कमलों से तो पन्ना और आसपास के सभी विस्तार की महिमा और भी अधिक बढ़ती जा रही है।

भगवान शिव पार्वती की भ्रमण स्थली

सतयुग में देवों के देव महादेव जिनके द्वारा समस्त धर्मग्रन्थों का उद्‌गम माना जाता है। देवी पार्वती के साथ भूलोक में भ्रमण करते हुये विन्ध्याचल पर्वत पर केन नदी की सहायक किलकिला नदी के किनारे पहुँचे, तो उन्होंने इस भूमि को आदरपूर्वक प्रणाम किया और पार्वती जी से कहा– 'हे देवी! भविष्य में कलियुग के अंत में इस स्थान पर स्वयं परब्रह्म परमात्मा परमहंसों सहित इन्द्रावती के स्वरूप में अवतरित होंगे। इसलिए मैंने इस भूमि को प्रणाम किया है।'

यह जो विशाल शिला दिखाई दे रही है, इसे महादेवी लक्ष्मी ने अपने आँसुओं से धोया है जिस पर बैठकर उन्होंने सात कल्पान्त तक घोर तपस्या की है।

अनन्त श्री प्राणनाथ जी मंदिर
(श्री गुम्मट जी)
(The Temple of Unity)

सन् 1690 से 1693 में निर्मित एवं विन्ध्याचल पर्वत की परम पवित्र रमणीय शिखर पर प्राचीन बुन्देली स्थापत्य कला से निर्मित यह विश्व का प्रथम अष्ट पहलदार मंदिर सहस्र दल कमल पर टिका है जिसकी

खूबसूरती बेमिसाल है। यह मंदिर महामति प्राणनाथ जी के निर्देशानुसार उनके परम शिष्य महाराजा छत्रसाल द्वारा कराया गया। निज मंदिर के मध्य में महामति श्री प्राणनाथ जी साक्षात् ब्रह्मयोग अवस्था में नित्य विराजमान हैं। आज यह परम पावन भूमि अखण्ड मुक्तिपीठ पद्मावती पुरी के नाम से जगत में प्रसिद्ध है। यह ऐसी विशिष्ट ध्यान-स्थली है जहाँ महामति श्री प्राणनाथ जी ब्रह्मयोग अवस्था में महाराजा छत्रसाल एवं अन्य भक्तजनों को प्रत्यक्ष रूप से दर्शन देकर उनकी मनोकामनाएँ पूर्ण करते रहे और आज भी कर रहे हैं। यह स्थान विश्व भर के श्रद्धालुओं को अपनी ओर आकर्षित करता है। आइये! आप भी श्री 5 पद्मावती पुरी धाम पन्ना के परम पावन मंदिरों के दर्शन कर कृतार्थ हों।

श्री पंजा साहब

श्री गुम्मट जी की आठ गुमटियों के बीचों-बीच नवाँ विशाल गुम्मट है। इस बीच वाले गुम्मट पर स्वर्ण कलश सुशोभित है जिसके शिखर पर पूर्णब्रह्म परमात्मा की ज्ञान शक्ति, आवेश शक्ति, आनन्द शक्ति, आज्ञा शक्ति और तारतम शक्ति के समन्वित आशीर्वाद स्वरूप पंजा प्रतिष्ठित है जिसे आदर सहित श्री पंजा साहब भी कहते हैं।

श्री लच्छीदास का कड़ा

(The Hand-bangle of Seva-spirit and Blessings)

महात्मा लच्छीदास जी एक ऐसे सिद्ध संत थे जो लोहे से सोना बनाने की कला जानते थे और गुम्मट जी को स्वर्णमयी बनाने के इच्छुक थे। त्रिकालदर्शी श्री प्राणनाथ जी ने उनके इरादे का दुष्परिणाम जानकर

इस रसायन को कुण्ड में फिकवा दिया। साथ ही उनके सेवाभाव का सम्मान करते हुए उनके हाथ का लौह-कड़ा मंदिर के पृष्ठ द्वार पर लगवा दिया और उनसे कहा कि इस कड़े के माध्यम से तुम्हारा नाम श्रद्धालुओं में सदैव बना रहेगा क्योंकि मंदिर के दर्शन उपरान्त जो इस कड़े का स्पर्श करेगा वह हर प्रकार से रोगमुक्त रहेगा। आज भी कई श्रद्धालु जन अपने स्वास्थ पर इस कड़े का सकारात्मक प्रभाव अनुभव करते हैं।

श्री बंगला जी मंदिर

(The temple of Wisdom)

सन् 1683 में निर्मित यह मंदिर श्री प्राणनाथ जी प्रेरित धार्मिक संसद भवन है, जहाँ आध्यात्मिक ज्ञानोपदेश के साथ-साथ श्री प्राणनाथ जी द्वारा समस्त श्रद्धालुजन एवं महाराजा छत्रसाल को धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक मार्गदर्शन मिलता रहा। महाराज छत्रसाल जी का विधिवत राज्याभिषेक इसी बंगला जी दरबार में 1687 में श्री जी के हाथों हुआ था। आज भी यहाँ से लिये जाने वाले महत्वपूर्ण निर्णय परमात्मा के आदेश माने जाते हैं और यहाँ से प्राप्त आशीर्वाद परमात्मा का ही आशीर्वाद माना जाता है।

पन्ना जो बहुमूल्य हीरों की धरती के लिये जग-प्रसिद्ध है, वह श्री प्राणनाथ जी के आशीर्वाद के फलस्वरूप है जिसका सर्वप्रथम वरदान उन्होंने महाराजा छत्रसाल को लोककल्याण एवं धर्मरक्षा हेतु घुड़लई अमावश्या के दिन इसी बंगला जी मंदिर से देते हुए कहा था-'हे छत्रसाल! आज के दिन तुम्हारा घोड़ा जितनी भूमि पर दौड़ेगा, उस भूमि से हीरे

निकलेंगे।

छत्ता तेरे राज में, धक धक धरती होय।
जित-जित घोड़ा पग धरे, तित-तित हीरा होय ।।

घुड़लई अमावश्या के दिन मंदिर परिसर में बच्चों को प्रतीकात्मक रूप से घुड़सवारी करवाकर इस परम पावन प्रसंग के स्मरण किये जाने की परंपरा है। यह दृश्य अत्यंत रोचक एवं दर्शनीय होता है।

रासमण्डल

वर्ष में सिर्फ एक बार खुलने वाला अद्वितीय मंदिर :

श्री बंगला जी के उत्तर पूर्व कोने में रासमंडल है, जहाँ पर शरदपूर्णिमा के अवसर पर पाँच दिन तक रात-दिन रासलीला होती है, जिसका आनन्द विश्व भर के श्रद्धालु आकर प्राप्त करते हैं।

श्री प्राणनाथ जी म्यूजियम

इसमें श्री प्राणनाथ जी एवं महाराजा छत्रसाल से संबंधित सोलहवीं एवं सत्रहवीं शताब्दी के वस्त्र, आभूषण, शस्त्र-अस्त्र, साहित्य, चित्रकारी एवं उनके जीवन से संबंधित अन्य विविध बहुमूल्य वस्तुओं का दर्शनीय संग्रह है जो श्री गुम्मट-बंगला जी मंदिर परिसर (ब्रह्म चबूतरा) पर स्थित है।

सद्गुरु धनी श्री देवचन्द्र जी मंदिर

(The Temple of Gratitude)

जिन्होंने सर्वप्रथम आत्मज्ञान की खोज की और परब्रह्म परमात्मा

का साक्षात्कार हुआ, ऐसे श्री निजानंद सम्प्रदाय के संस्थापक धनी श्री देवचन्द्र जी महाराज की स्मृति स्वरूप गुरु परंपरा का निर्वहन एवं अपने सद्गुरु के प्रति कृतज्ञता भाव का प्रतीक यह मंदिर है। सद्गुरु महाराज जब धर्मचर्चा करते थे, तब चमत्कारिक लीलाएँ स्वयं ही घटित हो जाती थी- जैसे कि जमुना जी का प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होना, श्री कृष्ण जी द्वारा प्रत्यक्ष भोजन स्वीकार करना, भक्तों को स्वर्ण-पात्र प्रदान करना आदि। सन् 1687 में श्री 5 पद्मावतीपुरी धाम की स्थापना के पश्चात् इस मंदिर की प्रतिष्ठा की गई थी।

श्री बाईजू राज मंदिर

(The Temple of Bliss)

सन् 1693 में किलकिला नदी के मनोरम तट पर निर्मित इस मंदिर में प्राचीन बुन्देली स्थापत्य कला के दर्शन होते हैं। इस मंदिर का निर्माण श्री प्राणनाथ जी की अभिन्न आनन्द स्वरूपा श्री बाईजू राज महारानी की स्मृति में किया गया है। धामगमन के पश्चात जब श्री बाईजूराज महारानी का 'अग्नि संस्कार' हो रहा था, तो उपस्थित विरह व्याकुल श्रद्धालु जनों की आस्था पूर्ति के लिये उन्होंने स्वयं अग्नि के बीच से प्रकट होकर सभी को आश्वस्त किया कि मैं सदा ही आप सभी के बीच रहूँगी। अतः आज भी श्रद्धालुओं की मनोकामनाएँ पूर्ण होती है और उनकी हर प्रकार की विपत्तियों का निवारण होता है। जन्म से मरण तक सभी संस्कार इसी मंदिर परिसर में सम्पन्न होते हैं।

श्री चौपड़ा मंदिर

(The Temple of Surrender Healing Tartam Water)

महाराजा छत्रसाल ने सन् 1683 ई. में अपने में सद्गुरु के प्रति अनन्य श्रद्धा, भक्ति और समर्पण के रूप में इस मंदिर का निर्माण किलकिला नदी की गोद में करवाया था। यह एक तपस्थली है, जहाँ कई ब्रह्ममुनियों ने पूर्णब्रह्म परमात्मा के साक्षात् दर्शन किए हैं जो आज भी ध्यान करने के लिये उत्तम स्थान माना जाता है। श्री प्राणनाथ जी की प्रथम पधरावनी करते हुए जब उनके स्वागत में महाराजा छत्रसाल ने अपनी पाग का पाँवड़ा बिछाया, तो रानी की सेवा को भी स्वीकार करने के लिये श्रीजी ने पाग के पाँवड़े को छोटा कर दिया था मंदिर के उत्तर पूर्व की ओर स्थित मीठे, स्वच्छ एवं शीतल जल का चौपड़ा श्रद्धालुओं के आकर्षण का केन्द्र है। औषधीय गुणों से युक्त इस जल को पीने से दैहिक, दैविक और भौतिक सभी विकार समाप्त हो जाते हैं। यह जल कभी दूषित नहीं होता। बताया जाता है कि इस स्थान पर पूर्व में यहाँ पर 52 चौपड़े थे, लेकिन आज 7 ही दिखाई देते हैं। श्री प्राणनाथ जी ने छत्रसाल के आदरभाव व वीरता को देखकर उनका राज्याभिषेक किया था और महाराजा छत्रसाल ने पन्ना को अपनी राजधानी बनाया था।

ब्रह्ममुनि श्री केशव कुंज

श्रीमत्तारतम वाणी श्री कुलज़म स्वरूप संकलन भूमि

इस परम पावन भूमि पर, केशव कुञ्ज ब्रह्म मुनि श्री केशवदास जी के नेतृत्व में, महामति श्री प्राणनाथ जी के श्रीमुख से अवतरित आवेश वाणी, जो उनकी लगभग 35 वर्षों की आत्म जागनी अभियान यात्रा के

दौरान विभिन्न स्थानों पर अवतरित हुई थी, को श्री प्राणनाथ जी की आज्ञानुसार सुव्यवस्थित महाग्रंथ के रूप में संकलित करने की अहम सेवा, श्री महामति के आत्मलीन होने के पश्चात (संवत् 1750 में), निभाई गई। बाद में, इस दिव्य वाणी को श्री प्राणनाथ जी के प्रगटोत्सव के दिन, आश्विन वदी चतुर्दशी को श्री गुमटजी में पधराया गया। आज, विश्व भर के लोग केशवदास जी के अमूल्य सेवा कार्य से लाभान्वित हो रहे हैं। अतः, इस ब्रह्मज्ञान रूपी गंगा में स्नान करने वाले सभी मनुष्य सदा-सदा के लिए उनके ऋणी रहेंगे। आप अपने मित्र तीर्थगुरु भगवान रेवादास से श्री प्राणनाथ जी के बारे में कुछ शब्द सुनकर उन्हें खोजने दिल्ली की ओर दौड़ पड़े, यह कहते हुए :

ए तो अक्षरातीत था, तुम ना करी पहचान ।
अब मैं उत ही जात हूं, मुझे आया ईमान ।।

सिद्धपुर में आपका निवास श्री तारतम धर्म शिक्षा का उपदेश भवन बना। महामति प्राणनाथ के परम शिष्य महाराजा छत्रसाल जू की हवेली चौपड़ा मंदिर के दक्षिण की ओर करीब दो सौ मीटर की दूरी पर एक किलानुमा महल बना है जिसे छत्रसाल की गढ़ी कहा जाता है। यह दर्शनीय और सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। ध्यान करने के लिए यह भूमि उत्तम है।

श्री खेजड़ा मंदिर

(The Temple of Empowerment)

यह एक पुण्य स्थली है जहाँ खेजड़ा अर्थात् शमी के वृक्ष के नाम से मंदिर स्थित है। सन् 1685 में विजयादशमी के मंगल पर्व पर श्री प्राणनाथ जी ने महाराजा श्री छत्रसाल जी को लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की दिव्य शक्तियुक्त तलवार एवं विजय स्वरूप बीड़ा बख्शीश

कर सदा विजयी रहने का आशीर्वाद दिया था। फलस्वरूप उनकी छोटी सी सेना ने हजारों की मुगल सेना को परास्त किया था। इसके बाद मुगल सेनाओं के साथ होने वाले सभी युद्धों में वे सदा विजयी रहे। बड़ी विपत्तियों के निवारण हेतु आज भी मंदिर के दर्शन की महिमा है। प्रतिवर्ष विजयादशमी के दिन मंदिर ट्रस्ट की ओर से महाराजा छत्रसाल जी के वंशज प्रतिनिधि को आशीर्वाद स्वरूप तलवार भेंट की जाती है। शरदपूर्णिमा के दो दिन पूर्व इस मंदिर से निकलने वाली शोभायात्रा विशेष रूप से दर्शनीय होती है। नक्तनपुरी जामनगर, और महामंगल पूरी सूरत; गुजरात से शुरु हुई श्री प्राणनाथ जी की जनजागरण यात्रा के प्रतीक रूप यह शोभायात्रा श्री बंगला जी मंदिर में विराजमान होती है।

किलकिला नदी-अमराई घाट

यह वही पावन नदी है जिसे श्री प्राणनाथ जी ने अपने चरण स्पर्श से निर्मल किया था। तत्पश्चात उन्होंने एवं उनके साथ जन-जागृति अभियान में समर्पित परमहंसों ने सर्वप्रथम स्नान किया था। इस प्रकार नदी का जहर दूर कर गाँववासियों को सुख प्रदान किया और प्रकृति को भी नवजीवन दिया।

विष की नदिया अमृत किन्ही, सुख सबन पहुंचाए ।

महामति श्री प्राणनाथ जी की दिव्य वाणी को सम्यक रूप से समझने के लिये पन्ना अवश्य पधारें। आज पन्ना धाम से ही विश्वभर में महामति प्राणनाथ के आत्म-जागृति का संदेश और 'सुख शीतल करूं संसार' के महास्वप्न को साकार करने हेतु विविध पुरी, धाम एवं सैकड़ों जागनी केंद्र एवं संस्थाएं देश-विदेश में सेवा में समर्पित है। इनमें से कुछ

ही स्थानों के नाम का यहाँ उल्लेख है।



श्री 5 नवतनपुरी धाम, जामनगर
जहां से सर्वप्रथम तारतम बीज उदय हुआ



श्री 5 महामंगलपुरी धाम, सूरत,
जहां से जागनी अभियान का मंगलमय शुभारंभ हुआ



श्री निजानंद आश्रम, रतनपुरी, यूपी,
श्री कुलजम स्वरूप की प्रथम सम्पूर्ण टीका एवं देश विदेश में श्री निजानंद जागनी अभियान आंदोलन को जारी रखने वाला केंद्र



श्री प्राणनाथ जी मंदिर, श्री निजानंद आश्रम, वडोदरा :
श्री प्राणनाथ टीवी सीरियल, छत्रसाल वेब सीरीज, निजानंदी बाल एनिमेशन सीरीज, सत्य दर्शन एवं परमधाम दर्शन आदि मल्टीमीडिया प्रोडक्शन सेवाओं की जन्म भूमि



श्री प्राणनाथ जी मंदिर, शामलाजी



श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, यूपी, श्री कुलजम स्वरूप एवं बीतक टीका सहित अन्य साहित्य निर्माण एवं जागनी सेवा केंद्र



श्री मंगल धाम, कालिमपोंग, नेपाल सहित देश विदेश में
धर्म प्रचार, सेवा, साहित्य प्रकाशन सेवा



श्री निजानंद आश्रम, शेरपुर

बुन्देलखण्ड नरवीर केसरी महाराजा छत्रसाल : तलवार और आत्मा का संगम

भारतीय इतिहास में कुछ व्यक्तित्व ऐसे हैं जो केवल युद्धभूमि में नहीं, बल्कि चेतना के स्तर पर भी युग को बदलते हैं। महाराजा छत्रसाल बुंदेला (1649–1731) उन्हीं में से एक हैं। वे केवल मुग़ल–विरोधी योद्धा या बुंदेलखंड के स्वतंत्र राज्य के संस्थापक नहीं थे– वे एक ऐसे युगपुरुष थे, जिन जीवन में शौर्य और भक्ति, नीति और प्रेम, तलवार और तारतम ज्ञान–एक ही नदी के दो किनारे थे।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि : संघर्ष की विरासत

छत्रसाल का जन्म उस काल में हुआ जब बुंदेलखंड मुग़ल सत्ता के क्रूरतम दबाव में था। उनके पिता चंपतराय और माता सरंधा मुग़लों के विरुद्ध सशस्त्र संघर्ष में संलग्न थे। जन्म मोर पहाड़ी की उस तूफानी रात को हुआ, जब मुग़ल सैनिक चारों ओर से घेर रहे थे–एक नवजात शिशु की पहली चीख़ युद्ध के शोर के बीच गूँजी।

मात्र साढ़े बारह वर्ष की आयु में माता–पिता का बलिदान देखकर भी वे टूटे नहीं। छत्रपति शिवाजी से भेंट कर स्वराज्य का वैचारिक संस्कार ग्रहण किया। पाँच घुड़सवारों और पच्चीस पैदल सैनिकों से आरंभ कर उन्होंने 52 से अधिक निर्णायक युद्धों में विजय पाई, औरंगज़ेब के एक–के–बाद–एक सेनानायकों को पराजित किया और अंततः बुंदेलखंड में एक स्वतंत्र, न्यायपूर्ण राज्य की स्थापना की। राष्ट्रकवि भूषण की पंक्ति इस योगदान को संक्षेप में कह देती है–

छत्ता न होता तो, सुन्नत होत सबन की।

उनका शासन-मॉडल भी उतना ही उल्लेखनीय था। लोकभाषा बुंदेली में प्रशासन, तीन-स्तरीय पंचायती न्याय-व्यवस्था, बहुधर्मी और समावेशी सेना, 82 कवियों का संरक्षण, और जल-संरक्षण से लेकर सैन्य आत्मनिर्भरता तक- उनका राज्य केवल सत्ता नहीं, एक सभ्यता था। इतिहास इस काल को बुंदेलखंड का स्वर्णयुग कहता है।

आध्यात्मिक आयाम : संघर्ष का वास्तविक स्रोत

किंतु इन सबके मूल में एक गहरी आत्मिक यात्रा थी। माता सरंधा को स्वप्न में दिव्य संदेश मिला था- 'मातृभूमि को उत्पीड़कों से मुक्त कराने वाला शक्तिपुत्र तुम्हारी कोख में आ चुका है।' यह केवल एक माँ का स्वप्न नहीं था-यह उस आत्मा के अवतरण की पूर्व-घोषणा थी, जिसे एक विशेष दिव्य कार्य के लिए भेजा गया था।

सन् 1682 में धुबेला झील के निकट महामति श्री प्राणनाथ जी से प्रथम साक्षात् मिलन सन् 1683 में हुआ और छत्रसाल को केवल एक गुरु नहीं मिला, उन्हें अपने समग्र संघर्ष का अर्थ मिला। जैसे श्रीकृष्ण ने अर्जुन को युद्धभूमि में गीता का बोध दिया, वैसे ही महामति प्राणनाथ जी ने छत्रसाल को तारतम ज्ञान दिया। कुलजम स्वरूप और बीतक की वह दिव्य वाणी, जो निराकार के भी पार परब्रह्म के स्वरूप, धाम और लीला की हकीकत उद्घाटित करती है।

इस ज्ञान का मर्म था कि समस्त धर्म-परंपराएँ एक ही परमसत्य की भिन्न-भिन्न अनुभव-धाराएँ हैं। छत्रसाल ने इसी दृष्टि से शासन किया। उनका संघर्ष किसी समुदाय के विरुद्ध नहीं, अन्याय और आत्मा की

दासता के विरुद्ध था। प्राणनाथ जी ने उन्हें आध्यात्मिक नाम 'साकुंडल' दिया और पन्ना को वैश्विक आध्यात्मिक चेतना का केंद्र बनाया। उनके मुख से निकले शब्द इस समर्पण के साक्षी हैं–

छत्रसाल तिन ऊपर, तन मन धन कुरबान।

इस समर्पण के बाद उनकी तलवार केवल राजनीतिक अस्त्र नहीं रही–वह एक आध्यात्मिक दायित्व बन गई। शक्ति अब साधन नहीं, साधना बन चुकी थी।

समग्र दृष्टि : आज के लिए संदेश

महाराजा छत्रसाल का जीवन ऐतिहासिक घटनाओं के क्रम के साथ–साथ आत्मिक यात्रा के रूप में भी महत्व रखता है। इस में बाह्य संघर्ष और आंतरिक साधना परस्पर अविभाज्य हैं।

उनका जीवन आज भी यह उद्घोष करता है– सच्चा स्वराज केवल भूमि की मुक्ति नहीं, आत्मा की मुक्ति है; सच्चा नेतृत्व सत्ता की भूख नहीं, सेवा का संकल्प है; और सच्ची शक्ति वह है जो करुणा, विवेक और प्रेम से अनुशासित हो। यही महाराजा छत्रसाल का स्थायी संदेश है और यही इस युग की सबसे बड़ी आवश्यकता भी।

छत्रसाल के अंतर्धान के लगभग एक शताब्दी बाद भी यह चेतना समाप्त नहीं हुई। 1829 ई. के बाद राजा परीक्षित और रानी गजमाला के काल में अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष हेतु रानी गजमाला बुंदेलखंड में भ्रमण कर जन–जागृति और स्त्रियों को युद्ध के लिए प्रेरित करती रहीं। इसी परंपरा का उत्कर्ष झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई के जीवन में दिखाई देता है। सांप्रदायिक परंपरा के अनुसार वे परमहंस महाराज श्री जुगलदास जी की

शिष्या थीं। 1857 के संग्राम में प्रणामी युवाओं और व्यापारियों ने रानी को गुप्त सूचना, रसद और आर्थिक सहायता दी। स्त्री-शक्ति, साहस, न्याय और तारतम्य-केंद्रित समन्वय- ये प्रणामी दर्शन के मूल मूल्य-रानी लक्ष्मीबाई के जीवन और नीतियों में स्पष्ट रूप से प्रतिध्वनित होते हैं। इस खंड की ऐतिहासिक उपयोगिता यह है कि वह यह दिखाता है : परंपराएँ केवल कर्मकांड नहीं होतीं; वे सामाजिक ऊर्जा भी होती हैं- जो समय-समय पर राजनीतिक और सांस्कृतिक आंदोलन को भीतर से शक्ति देती हैं।

Watch PRANNATH TV Serial on YouTube : Prannath Multimedia Watch CHHATRASAL web series on MX Player and Shemaroo Apps; Watch NIJAANANDI animation series on YouTube Kids

महामति श्री प्राणनाथ और महात्मा गांधी

महात्मा गांधी को समझने के लिए उनकी माता पुतलीबाई को समझना आवश्यक है। गांधीजी के 25 वर्षों तक निजी सहायक रहे श्री प्यारेलाल के अनुसार, पुतलीबाई जूनागढ़ के निकट दात्राणा गाँव के एक प्रणामी परिवार से थीं। वे नियमित रूप से बालक मोहन को अपने घर के निकट स्थित प्रणामी मंदिर ले जाती थीं- वही मंदिर जो आज भी गांधीजी के जन्मस्थान कीर्ति मंदिर से मात्र पचास कदम की दूरी पर खड़ा है।

हार्वर्ड के प्रोफेसर स्टीफन ने गांधीजी की शताब्दी वर्ष पर कहा- 'गांधी जी को समझने के लिए उनकी माँ के धार्मिक विचारों को समझना अनिवार्य है। उन विचारों की जड़ें सीधे निजानंद (प्रणामी) संप्रदाय और

तारतम वाणी में थीं। बचपन से ही बालक मोहन के चित्त में जो बीज अंकुरित हुए- ईश्वर की एकता, सभी धर्मों का सम्मान, करुणा और सत्य - वे इसी परंपरा की देन थे। फ़िल्म गांधी में इसे इन शब्दों में कहा गया- ''हमारे मंदिर में पुजारी कुरान और गीता दोनों पढ़ते थे- एक से दूसरे में सहजता से जाते हुए।''

सन् 1888-90 में इंग्लैंड प्रवास के दौरान 20-21 वर्षीय गांधीजी ने ब्रिटिश विद्वानों की एक रचना में तारतम वाणी (श्री कुलजम स्वरूप) का अंग्रेज़ी अनुवाद पढ़ा। संभव है कि इसी पाठ ने उस युवा के भीतर जीवन-मिशन की चेतना जागृत की, जो आगे चलकर महात्मा बना।

दोनों महापुरुषों के विचारों में एक गहरी दार्शनिक एकता दिखती है। सत्य के विषय में तारतम वाणी कहती है-''परमात्मा ही सत्य हैं और केवल सत्य से प्राप्त किए जा सकते हैं ।'' और गांधीजी का जीवन-सूत्र था- ''सत्य ही ईश्वर है।'' अहिंसा और प्रेम के विषय में कुलजम स्वरूप कहता है-''परमात्मा तक पहुँचने का मार्ग केवल प्रेम है'' जिसे गांधीजी ने राजनीतिक शक्ति का स्रोत बनाया। सर्वधर्म सद्भाव में महामति का उद्घोष था- ''पूर्व और पश्चिम के शास्त्र वही सत्य बताते हैं.'' और गांधीजी की प्रार्थना ''ईश्वर अल्लाह तेरो नाम'' इस दर्शन का जीवंत रूप थी। सेवा और अपरिग्रह में महामति ने विनम्र सेवा को जागृति का फल बताया, तो गांधीजी ने ट्रस्टीशिप के सिद्धांत में इसी भाव को व्यावहारिक रूप दिया।

गांधी-दर्शन की वैश्विक अनुगूँज

तारतम वाणी की यह चेतना-धारा गांधीजी के माध्यम से केवल भारत तक सीमित नहीं रही, वह पूरे विश्व में फैली और इतिहास के

महानतम न्याय-आंदोलनों की प्रेरणा बनी।

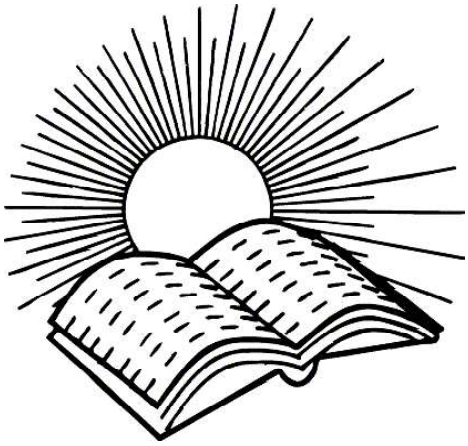
डॉ. मार्टिन लूथर किंग जूनियर ने अपनी पुस्तक Stride Toward Freedom में लिखा-''यदि मानवता को प्रगति करनी है, तो गांधी अपरिहार्य हैं। उन्होंने एक ऐसी मानवता की दृष्टि से प्रेरित होकर जीया, सोचा और कार्य किया जो शांति और सामंजस्य की ओर विकसित हो रही है। हम उन्हें अपने जोखिम पर नजरअंदाज कर सकते हैं।'' उन्होंने आगे कहा-''ईसा मसीह ने भावना और प्रेरणा दी, जबकि गांधी ने विधि दी'' और अपने स्वयं के अनुभव से उन्होंने स्वीकार किया- ''मुझे लगा कि यही एकमात्र नैतिक और व्यावहारिक मार्ग है जो पीड़ित लोगों के लिए स्वतंत्रता के संघर्ष में उपलब्ध है।''

अमेरिका के 44वें राष्ट्रपति बराक ओबामा ने कहा-''गांधी और नेल्सन मंडेला ने जो किया वह कठिन था। इसमें समय लगता है-एक कार्यकाल से अधिक, एक राष्ट्रपति से अधिक, एक व्यक्ति से अधिक।'' उन्होंने यह भी कहा-'' यदि संभव होता, तो मैं महात्मा गांधी के साथ भोजन करना पसंद करता।''

दक्षिण अफ्रीका के 'गांधी' कहे जाने वाले नेल्सन मंडेला ने कहा-''अनेक दृष्टियों से गांधीजी मेरे आदर्श हैं। हम दोनों ने औपनिवेशिक उत्पीड़न झेला और अपने-अपने लोगों को उन सरकारों के विरुद्ध संगठित किया जो हमारी स्वतंत्रता का हनन कर रही थीं। मैंने अहिंसक प्रतिरोध का आह्वान तब तक किया, जब तक वह प्रभावी रहा।''

ऐसा कह सकते हैं कि महात्मा गांधी निजानंद (प्रणामी) परंपरा के उस दिव्य प्रवाह के आधुनिक प्रतिनिधि थे, जो महामति प्राणनाथ जी ने तीन शताब्दी पूर्व प्रवाहित किया था। माता पुतलीबाई के संस्कार, तारतम

वाणी का सीधा अध्ययन और जीवनभर उन सिद्धांतों की व्यावहारिक अभिव्यक्ति-ये तीनों मिलकर एक अखंड आध्यात्मिक उत्तराधिकार की कथा बनाते हैं। गांधीजी के सत्य, अहिंसा और सर्वधर्म-प्रेम के मूल्य उस महान धारा के फल थे जिसका नाम है तारतम वाणी।



श्री प्राणनाथ जी की महत्त्वपूर्ण सर्व मंगलकारी घोषणायें

- परब्रहा तो पूरण एक है- पूर्णब्रह्म परमात्मा सब का एक है।
- सोई खुदा सोई ब्रह्म- पूर्णब्रह्म और खुदा या सुप्रीम ट्रुथ गॉड एक ही है।
- भेष भाषा जिन रचो, रचियो मायने असल- संसार के धर्म ग्रंथो में सिर्फ भाषाओं का ही भेद हैं। ये सभी एक ही परम सत्य की ओर निर्देश करते हैं।
- प्रेम ब्रह्म दोऊ एक हैं- प्रेम और परब्रह्म एक ही स्वरूप हैं। परब्रह्म और आत्मायें प्रेम ही की मूर्ति हैं।
- पंथ होवे कोट कलप, प्रेम पोहोंचावे मिने पलक-
  प्रेम खोल देवे सब द्वार- प्रेम ही एक ऐसा सक्षम साधन है, जो इस जीवन में सच्चिदानन्द प्रियतम, परमधाम और दिव्य लीला का आनन्द दे सकता है।
- मानखे देह अखण्ड फल पाइये, सो क्यों पाए के वृथा गमाइये-मनुष्य देह अखण्ड सुख प्राप्ति का अनमोल अवसर है। इसे व्यर्थ में नहीं गँवाना चाहिये।
- अन्दर नाहीं निर्मल, फेर फेर नहावे बाहेर- बाह्य शुद्धि मात्र से आध्यात्मिक यात्रा संभव नहीं है। प्रियतम मिलन के लिए हृदय की निर्मलता परम आवश्यक है।
- सब साथ करूं मै आप सा, तो मैं जागी परमान- जागृत आत्मा वही है, जो अपने संपर्क में आने वाले सभी को अपने समान आध्यात्मिक सुख सम्पदा उपलब्ध करवा दे।
- सुख शीतल करूँ संसार- तारतम ज्ञान द्वारा मानव मात्र के गुण, अंतःकरण और इन्द्रियों के मायावी विकारों का शमन करने से ही संसार में सुख और शीतलता स्थापित होगी।

।। *प्रेम ब्रह्म दोऊ एक है : प्रेम ही परब्रह्म है* ।।

सुक व्यास कहें भागवत में, प्रेम ना त्रिगुन पास ।
प्रेम बसत ब्रह्मसृष्ट में, जो खेले सरूप बृज रास ।। 1
तो नवधा से न्यारा कहया, चौदे भवन में नाहें ।
सो प्रेम कहां से पाइए, जो बसत गोपिका माहें ।। 2
पंथ होवे कोट कलप, प्रेम पोहोंचावे मिने पलक ।
जब आतम प्रेम सों लागी, दृष्ट अंतर तबहीं जागी ।। 3
प्रेम आतम दृष्ट न छोड़े, प्रेम बाहेर दृष्ट न जोड़े ।
पिया के चित सों चित न मोड़े, प्रेम और सबन सों तोड़े ।। 4
जब आया प्रेम सोहागी, तब मोह जल लेहेरां भागी ।
जब उठे प्रेम के तरंग, ले करी स्याम के संग ।। 5
जब चढ़े प्रेम के रस, तब हुए धाम धनी बस ।
जब उपजे प्रेम के तरंग, तब हुआ धाम धनी सों संग ।। 6
प्रेमें करी अलख की लख, त्रैलोकी की खोली चख ।
तब छूट्या सबों से अभख, सब हुए स्याम सनमुख ।। 7
जब प्रेम हुआ झकझोल, तब अंतर पट दिए खोल ।
जब चढ़े प्रेम के पुन्ज, निज नजरों आया निकुंज ।। 8
प्रेम सेन्या है अति बड़ी, जब मूल आउध ले चढ़ी ।
सो रहे न काहू की पकड़ी, यासों सके न कोई लड़ी ।। 9
याके प्रेम श्रवन मुख बान, याको प्रेम सेवा प्रेम गान ।
याको ग्यान भी प्रेम को मूल, याको चलन न होए प्रेम भूल ।। 10
प्रेम खोल देवे सब द्वार, पारै के पार जो पार ।
प्रेम धाम धनी को विचार, प्रेम सब अंगों सिरदार ।। 11
कहे महामत प्रेम समान, तुम दूजा जिन कोई जान ।
ले उछरंग ते घर आए, पिया प्रेमें कंठ लगाए ।। 12

।। महामति प्राणनाथ प्रदत्त श्री तारतम वाणी से ।।

श्री निजानन्द-पद्धति (संस्कृत)

ब्रह्मानन्दरसज्ञानां ब्रह्मज्ञानवतां सताम् ।
पद्धतिं ब्रह्मसृष्टीनां वक्ष्यामि श्रृणु सुन्दरि !
गोत्रमुक्तं चिदानन्दं ब्रह्मानन्दो हि सद्गुरुः ।
शिखा ज्ञानमयी प्रोक्ता सूत्रमक्षररूपकम् ।।
किशोरी परमं चेष्टं सेवनं पुरुषोत्तमम् ।
पातिव्रत्य मनन्यत्वं साधनं समुदाहृतम् ।।
वृन्दावनं नित्यमुक्तं विलास-सुख संज्ञकम् ।
जाप्यं च युगलं नाम तारतम्यमनुः स्मृतः ।।
ब्रह्मविद्या परादेवी देवो ब्रह्मसनातनम् ।
शाला गोलोक इत्युक्तं द्वारमूर्ध्वंमुदाहृतम् ।।
स्वसंवेदः समादिष्टः फलं नित्यविहारकम् ।
दिव्य ब्रह्मपुरं धाम परात्परमुदाहृतम् ।।
सद्गुरोश्चरणं क्षेत्रं सर्वशुद्धिकरं परम् ।
यमुना संज्ञकं तीर्थ मननं प्रेमलक्षणम् ।।
श्रीमद्भागवतं प्रोक्तं श्रवणं सारमद्भुतम् ।
ऋषिः प्रोक्तो महाविष्णुः ज्ञानं जाग्रत्स्वरूपकम् ।।
आनन्दाख्यं कुलं प्राप्तं नित्ये धाम्नि प्रकीर्तितम् ।
सम्प्रदायश्चिदानन्दो निजानन्दैः प्रकाशितः ।।

नोट- *ब्रह्मसृष्टि परमहंस सुन्दरसाथ की यह धार्मिक पद्धति, श्री जयकृष्ण दास हरिहर गुप्त, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, बनारस सीटी द्वारा सन् 1940 में 'अपौरुषेयम् माहेश्वरतंत्रम्' के पृष्ट 141-42 में प्रकाशित है।*

श्री निजानन्द-पद्धति (हिन्दी)

सतगुरु ब्रह्मानन्द हैं, सूत्र है अक्षर रूप ।
शिखा सदा तिनसे परे, चेतन चिद जो अनूप ।।
सेवन है पुरुषोत्तम, गोत्र चिदानंद जान ।
परम किशोरी इष्ट है, पतिव्रता साधन मान ।।
श्री जुगल किशोर को जाप है, मंत्र है तारतम सोए ।
ब्रह्मविद्या देवी सही, पुरी नवतन मम जोए ।।
अठोत्तर सो पख शाखा सही, शाला है गौलोक ।
सतगुरु चरण को क्षेत्र है, जहाँ जाए सब शोक ।।
सुख विलास नित्य विन्द्रावन, ऋषि महाविष्णु हैं जोए ।
वेद हमारो स्वसं है, तीरथ यमुना सोए ।।
शास्त्र श्रवण श्री भागवत, बुद्ध जाग्रत को ज्ञान ।
कुल मूल हमारो आनंद है, फल नित्य विहार प्रमान ।।
दिव्य ब्रह्मपुर धाम है, घर अक्षरातीत निवास ।
निजानंद है संप्रदा, ए उत्तर प्रश्न प्रकाश ।।
श्री देवचन्द्र जी निजानंद, जिन प्रगट करी संप्रदा एह ।
तिनथें हम एह लखि है, हम द्वार पावें अब तेह ।।

श्री विजयाभिनंद बुद्धजी को प्रणाम

नमो नमः सुशान्ताय
दीप्तिरूपाय तेजसे ।
विधिहीनाय कांताय
जगतः कांतिरूपिणे ।।

ॐ नमः ॐ नमो वै बुद्धरूपाय कलंकिता (कल्किता) यै व ॐ नमः ॐ नमः ॐ नमो धाम रूपाय वै भान्ति रूपाय वै ते नमस्ते नमः।
बुद्ध गीता 57 (भविष्य पुराण), बुद्ध स्तोत्रम् 1 (लिंग पुराण)

* जो अत्यधिक सुंदर एवं भांति स्वरूप, ज्ञानमयी दीप्ति से भरपूर, तेजोमय स्वरूप वाले, लौकिक कर्मकाण्डों से रहित, सुख स्वरूप, संसार को ब्रह्मज्ञान की आभा से भरपूर करने वाले हैं।
* जो सम्पूर्ण जगत के स्वामी हैं और जागृत बुद्धि रूपी घोड़े पर विराजमान हैं।
* जो सबकी बुद्धि को सुंदर (जागृत) करके अखण्ड मुक्ति प्रदान करने वाले हैं।
* जो सत्व, रज तथा तम इन तीनों गुणों एवं इनके कारण होने वाले कर्मों से रहित हैं।
* जो अपने ब्रह्मज्ञान से स्वयं आदिनारायण को भी निराकार से परे का ज्ञान प्रदान कर उन्हें जागृत एवं अखण्ड स्वरूप प्रदान करने वाले हैं। जो मोह रूपी नींद से परे स्थित परब्रह्म के सत् अंग अक्षर ब्रह्म के भी स्वामी है।
* जो सभी आत्माओं के धाम स्वरूप व परम शान्ति के स्वरूप हैं और अपनी आत्माओं के प्रति प्रेम के संबंधको निभाने वाले हैं।

* श्री विजियाभिनन्द बुद्धजी की प्रार्थना *

भई नई रे नवों खण्डों आरती, श्री विजियाभिनंद बुधजी की आरती ।
प्रेम मगन होय उतारती, सखी आप पिया पर वारती ।। 1 ।।

दुष्टाई सबों की संघारती, सुख अखण्ड आनन्द विस्तारती ।
जन सचराचर तारती, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 2 ।।

सैयां सबे सिनगार साजती, मिनें सूरत पिया की विराजती ।
ए सोभा इतहीं छाजती, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 3 ।।

झालर अगणित बाजे ले बाजती, ब्रह्माण्ड में नौवत गाजती ।
कलियुग सैन्या सुन भाजती, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 4 ।।

सप्त धात सून्य मण्डल थाल, निरंजन जोत भई उजाल ।
झलहलिया इत नूरजमाल, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 5 ।।

पसरी दया प्रगटे दयाल, काटे दुनी के करम जाल ।
चेतन व्यापी भए निहाल, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 6 ।।

सैन्या सहित आए त्रिपुरार, आए ब्रह्मा जी पढ़त मुख वेद चार ।
विष्णु बोलत वानी जय जयकार, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 7 ।।

आये धरम राये और इन्द्र वरुण, नारद मुनि गुण गंधर्व चौदे भवन ।
सुर असुरों सबों लई सरन, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 8 ।।

आये सनकादिक चारों थम्भ, लिये खड़े संग विष्णु ब्रह्माण्ड ।
जो ब्रह्म अनभवी भए अखण्ड, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 9 ।।

* अर्थ *

1. वि.सं. 1735 के कुम्भपर्व पर हरिद्वार के शास्त्रार्थ में निजानंद सम्प्रदाय की विजय होने एवं शास्त्रोक्त प्रमाणों से सिद्ध होने के कारण महामति प्राणनाथ जी को विजयाभिनंन्द बुद्ध निष्कलंक घोषित किया गया। और समस्त सुन्दरसाथ धाम के धनी स्वरूप श्री प्राणनाथ जी की आरती उतारते हुए उनके गुणगान कर रहे हैं। सृष्टि के नव खण्डों में श्री विजयाभिनंद उनकी आरती हो रही है और सुन्दरसाथ मग्न होकर प्रेम से आरती गा रहे हैं ।
2. महामति प्राणनाथ के प्रगटन से सबकी कुबुद्धि व दुष्टता समाप्त हुई । सर्वत्र सच्चा सुख और अखण्ड आनन्द विस्तार कर चराचर जगत को मोक्ष देने वाली आरती नव खण्डों में हुई ।
3. सखियाँ इस खुशी के अवसर पर सुन्दर श्रृंगार कर हृदय में धामधनी को विराजमान कर शोभा युक्त हो आरती कर रही हैं । यह आनन्द नवों खण्डों के चराचर प्राणि प्राप्त कर रहे हैं ।
4. अनगिनत वाद्ययंत्रों द्वारा ब्रह्माण्ड में बुद्ध जी की प्रशंसा में हो रही है जिसे सुनकर आसुरी प्रवृत्ति-अज्ञान-अनीति की सेना दूर भाग रही है । नव खण्डों में जय जयकार हो रही है।
5. शून्य रूपी सप्तधातु के थाल पर निरंजन की ज्योति से धामधनी का नूर झिलमिला रहा है और उनके दिव्य स्वरूप के दर्शन से नवों खण्डों में जय-जयकार हो रही है।
6. कृपा के सागर दयालु धामधनी श्री प्राणनाथ जी प्रगट हुये हैं । चहुँओर उनकी कृपा व्याप्त हुई। दुनियाँ के कर्म-बंधन कटते जा रहे और सर्वत्र चेतनता व्याप्त होने से सभी कृतार्थ हुये । ऐसी आरती नव खण्डों में हो रही है।
7. शंकर जी सेना सहित, ब्रह्मा जी चार मुखों से वेदोच्चारण करते हुये तथा भगवान श्री विष्णु जय-जयकार करते हुए आये हैं । इस प्रकार नौ खण्डों में यह अपूर्व आरती हो रही है ।
8. धर्मराज, इन्द्र, वरुण, नारद मुनि, चौदह लोकों के गंधर्व, देव-दानव सभी ने विजयाभिनन्द बुद्ध निष्कलंक श्री प्राणनाथ जी की शरण ली । ऐसी नव खण्डों में नवीन आरती हुई ।
9. चार स्तम्भों के समान सनकादिक ऋषि, जो ब्रह्म के अनुभव करने से अखंड कहलाये वे भी भगवान विष्णु के साथ उपस्थित हो नवों खण्डों में जय-जयकार कर रहे है ।

जिन हद कर दई नवधा भगत, जुदी कर गाई पाई प्रेम जुगत ।
यों आए सुक व्यास बड़ी मत, भई नई रे नवौं खण्डों आरती ।। 10 ।।

आए नवनाथ चौरासी सिध, बरस्या नूर सकल या विध ।
इत आए बुध जी ऐसी किध, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 11 ।।

आए चारों सम्प्रदाए के साधु जन, चार आश्रम और चार वरन ।
चारों खूंटों के आए गावते गुन, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 12 ।।

आए गच्छ चौरासी अरहंती, दत्त जी दसनामी जो महंती ।
आए करम उपासनी वेदान्ती, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 13 ।।

आए खट दरसनी खट सास्त्र भेदी, बहत्तर फिरके आए अथर्व वेदी ।
आए सकल कैदी और बे कैदी, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 14 ।।

बुध जी की जोतें कियो प्रकास, त्रैलोकी को तिमिर कियो नास ।
लीला खेलें अखण्ड रास विलास, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 15 ।।

पियाजी हुकमें गावें महामत, उड़ायो असत थाप्यो सत ।
सब पर कलस हुओ आखिरत, भई नई रे नवों खण्डों आरती ।। 16 ।।

10. जिन शुकदेव मुनि ने श्रीमद्भागवत में नवधा भक्ति को बैकुण्ठ तक सीमित बताकर परमात्मा की प्राप्ति हेतु प्रेमलक्षणा भक्ति की महिमा गाई है, ऐसे बड़ी बुद्धि वाले द्वैपायन व्यास जी एवं शुकदेव मुनि भी आ गये हैं । इस तरह नौ खण्डों में नवीन आरती हुई ।
11. नव नाथ तथा चौरासी सिद्ध पुरुष भी आये, और सर्वत्र नूर की वर्षा होने लगी अर्थात् अखण्ड ज्ञान का प्रकाश फैलने लगा। श्री बुद्धजी ने श्री प्राणनाथ जी के रूप में आकर ज्ञान का ऐसा प्रकाश फैलाया कि संसार में उनकी इस प्रकार आरती जय-जयकार होने लगी ।
12. चारों सम्प्रदाय के आचार्य, साधुजन, चार आश्रम, चार वर्ण चाले चारों दिशाओं से धनी के गुण गाते हुये एकत्र हुये । इस प्रकार नौ खण्डों की नवीन आरती हुई ।
13. अरिहंत-जैन, चौरासी गच्छ के जानकार, दत्तात्रेय भगवान के उपासक, दसनाम सन्यासी, कर्मोपासक और वेदान्ती भी आये । इस तरह इस नवीन आरती का सभी ने गायन किया।
14. छह शास्त्रों के मर्मज्ञ, षटदर्शन के आचार्य, मुस्लिमों के बहत्तर फिरके तथा अथर्ववेद के ज्ञाता भी आये । कर्मबन्धन युक्त तथा मुक्त जन श्री विजयाभिनंद बुद्ध जी पर विश्वास कर आये और नौ खण्डों की आरती हुई ।
15. विजयाभिनन्द बुद्धजी के अपूर्व ज्ञान-ज्योति से तीनों लोकों की अज्ञानाधकार मिटा। दिव्य ज्ञान के अखण्ड प्रकाश में जागनी रास-लीला की गई । इस तरह नवीन आरती हुई।
16. धामधनी के आदेश से महामति श्री प्राणनाथ जी यह वाणी गाते हैं । इस वाणी द्वारा संसार में व्याप्त असत्य नष्ट हुआ। अन्धविश्वास और क्षर ब्रह्माण्ड के झूठे ज्ञान की समाप्ति और श्रेष्ठ ज्ञान का साम्राज्य हुआ । यह अपूर्व परम ज्ञान अंततः सभी ज्ञानों के शिखर पर कलशवत सुशोभित हुआ । इस प्रकार बुद्ध निष्कलंक अवतार की नौ खण्डों में नवीन आरती हुई ।




परब्रह्म का विलास लीला क्षेत्र
* अक्षर की विकास प्रक्रिया से परे
* आनंदलीला रस का प्रवाह एक पूर्णता से दूसरी पूर्णता की ओर बहता है
अक्षरातीत परब्रह्म
परमधाम
स्वलीला-अद्वैत
सत – चिद – आनंद - अनंत - अद्वैत
(परात्पर परब्रह्म)
अक्षर ब्रह्म की दो शक्तियां
त्रिपाद अमृत:
विद्या पाद
(पूर्णात्पूर्ण ब्रह्म)
अन्तरंगा शक्ति (योगमाया)
बहिरंगा शक्ति (महामाया)
अक्षर ब्रह्म का विकास लीला क्षेत्र: एक अपूर्णता से दूसरी पूर्णता की ओर
अक्षर ब्रह्म
सत स्वरुप, केवल ब्रह्म, सबलिक ब्रह्म
अविद्या पाद
(पूर्ण ब्रह्म)
अव्याकृत ब्रह्म
अक्षर स्वप्न
क्षर पुरूष
महाकारण - मोह सागर - महाविष्णु
महासमष्टि - महत बुध्धि का प्रथम
विचार स्वरुप - महत्तत्व -आदि इच्छा
नारायण की आत्मा ब्रह्मांडीय इच्छा, प्रकाश और शब्द के रूप में
कारण समुद्र - नारायण – द्वितीय विचार स्वरुप
हिरण्य गर्भ: ॥ एको अहं बहुश्याम् ॥
नारायण की आत्मा कॉस्मिक कृष्ण, कॉस्मिक क्राइस्ट कॉस्मिक महम्मद के रूप में
ब्रह्माण्ड का प्रक्षेपण प्रारंभ
सात शून्य
सृष्टि सर्जन
नारायण का अहम् – ईश्वर के रूप में
सर्वव्यापी आत्मा
क्षर सृष्टि में विकास का प्रवाह एक अपूर्णता से दूसरी अपूर्णता की ओर
निराकार : चेतन और जड़
परा - विराट पुरुष एवं अपरा - सावित्री
ज्योति स्वरुप का विशाल क्षेत्र
निरंजन-गायत्री- ॐकार – परा शक्ति (गीता)
अष्ट आवरण
हमारे सूर्य मंडल के चौदह लोक
(चेतना के विविध आयाम, विविध प्रकार के जीवों के निवास स्थान)
चौदहवाँ लोक: सत लोक, त्रिगुण धाम - त्रिदेव : ब्रह्मा, विष्णु, महेश
तप लोक: तपस्वी जनों का लोक
बारहवां लोक: जन लोक - निस्वार्थ सेवकों को प्राप्त लोक
ग्यारहवां लोक: महर्लोक – धर्मराज का दिव्य न्यायालय
दसवां लोक: स्वर्ग लोक – इंद्र, वरुण, देवता गण (प्राकृत प्रलय में महर्लोक में, हर चार अरब वर्ष के बाद ब्रह्माजी कारण शरीर में स्थित हो जाते हैं)
नवमां लोक: भूवर-पितृ लोक astral -आकाशिक तन
बर्ज़ख (कुरान) – पुर्गेटोरी (बाइबिल)
समर लैंड - जहां ऊँचे के लोकों में जाने से पूर्व अधूरी इच्छाएँ पूरी होती हैं |
आठवां लोक: पृथ्वी लोक- हमारी पृथ्वी का तल – स्थूल शरीर
सात पाताल लोक: पृथ्वी के भीतर
(हर लोक की अपनी एक विशिष्ट फ्रीक्वेंसी होती है |
जीव को उसकी अपनी फ्रीक्वेंसी की तरंगों के अनुसार वह लोक दिखता है)
दानव लोक: मरणशील जीवों का
गर्भोदक समुद्र - शेष शायी नारायण - विराट की आत्मा
जो नारायण तक की सृष्टि के आधार है, एवं
३११ ट्रिलियन वर्ष के बाद प्रलयाधिन
यह विराट चार्ट आचार्य बुद्धिप्रकाश बाजपेयी के मार्गदर्शन में उनकी 'विराट कॉसमॉस' अंग्रेजी पुस्तक के आधार पर तैयार किया गया है |
संक्षिप्त क्षर-अक्षर-अक्षरातीत विराट पट दर्शन: श्री प्राणनाथ तारतम वाणी एवं वेद-कतेब-शास्त्र आधारित